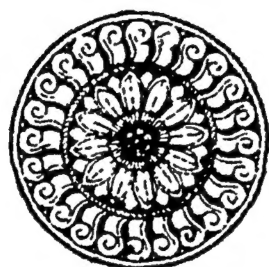
ऋषिदत्ता रास



मुनि मणिप्रभसागर

※ ऋषिदत्ता रास
मुनि मणिप्रभसागर

※ सपादन
पू साध्वी श्री हेमप्रभा श्री जी म सा

※ प्रकाशन
कान्ति प्रकाशन प्रतिष्ठान, पालीताणा

※ अर्थसहयोग
पूजनीया विदुषी आर्या रत्न श्री हेमप्रभाश्री जी
म सा के सदुपदेश से

जैन श्री संघ, मोकलसर

※ प्रकाशन वर्ष
वैशाख पूर्णिमा वि स २०४५, सन् १९८८

※ मुद्रक
एम एल प्रिण्टर्स
सरदारपुरा, जोधपुर

समर्पण - प्रसून

जिन के जीवन में अनमोल गुण-मणियों की

कान्ति

और

हृदय में प्रेम का **सागर**

तथा

वाणी में अद्‌भुत आकर्षण था

उन परम श्रद्धेय पूज्यपाद गुरुदेव की

पावन स्मृति में समर्पित

विनीत

मुनि मणिप्रभसागर

उपलब्ध प्रकाशन

			रुपये
उठ जाग मुसाफिर भोर भई	—आचार्य जिनकान्तिसागर सूरि		१० ००
अमर भये ना मरेंगे	,,	,,	१० ००
जिनगुरु गुण सचित्र पुष्पमाला	,,	,,	१० ००
पैंतीस बोल विवरण	,,	,,	१० ००
अंजना सती का रास	,,	,,	२ ००
मयणरेहा रास	,,	,,	२ ००
पोषध विधि प्रकरण (गुज)	,,	,,	३ ००
प्रतिमा बहार	,,	,,	३ ००
चैत्यवन्दन चतुर्विंशतिका	,,	,,	३ ००
चिन्तन चत्र	—मुनि मणिप्रभसागर		२ ५०
दादाचित्र संपुट	,,	,,	५० ००
इनसे शिक्षा लो	,,	,,	१ ००
क्षमाकल्याण चरित्रम्	,,	,,	१ ००
सप्तम शताब्दी स्मृति ग्रन्थ	,,	,,	१ ००
दादा जिनकुशल सूरि जीवन चरित्र	,,	,,	१ ००
गुरुदेव की कहानियाँ	,,	,	१ ००

□ □ □

अभिव्यक्ति

'अनुभवगुरू - चरण रज'
साध्वी हेमप्रभाश्री

कथा-कहानियों का महत्त्व आज से नहीं प्राचीनकाल से है। इसकी लोकप्रियता का कोई अपवाद नही है। क्या बालक, क्या वृद्ध, क्या मूर्ख, क्या विद्वान्, कहानी सभी को समानरूप से प्रिय है। उपदेशकों के लिए तो यह माध्यम बड़ा ही प्रभावी है। उपदेश वही सरल, सुबोध और आकर्षक होता है जिसमें नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों को सुरूचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया जाय। इसका सबसे अच्छा व उपयुक्त तरीका यही है कि उपदेश के साथ उपयुक्त कहानियो एवं दृष्टान्तो का सामंजस्य किया जाय।

आगम साहित्य के परिशीलन से विदित होता है कि उस युग में उपदेश के साथ-साथ उसकी भावना को अधिक प्रभावी व सर्वग्राह्य बनाने हेतु बीच-बीच में प्रसंगानुकूल कहानियों की संयोजना की जानी थी। यहां तक कि स्वयं भगवान महावीर के उपदेशों में भी स्थान-स्थान पर लघु कथाओ, रूपकों एवं दृष्टान्तों का प्रयोग मिलता है। ज्ञाता धर्म कथांग, विपाक सूत्र, उत्तराध्ययन, अंतगड़दशा, उपासक दशा आदि इसके ज्वलंत प्रमाण है।

उपदेश के साथ-साथ प्रसंगानुकूल कहानियों का चयन उपदेश को इतना प्रभावी, प्रेरक व रोचक बना देता है कि जनमानस बड़ो सहजता से आदर्शों के प्रति आस्थावान बन जाता है। श्रोता या पाठक के आचरण में सत्य उतरे। उनके चरित्र में संस्कारों की प्रतिष्ठा हो। वे कथा की मूल भावना से अनुप्राणित बने, यही तो उपदेश का मूल लक्ष्य है।

सामान्यत यह मान्यता है कि कहानी मनोरजन का साधन है। किन्तु जैन कथाओ एव बौद्ध कथाओ के लिए दावे के साथ कहा जा सकता है कि उनका मूल लक्ष्य मात्र मनोरजन या मानसिक तुष्टि नही है, वरन जन-जीवन मे उच्चतम सामाजिक, नैतिक व आध्यात्मिक-मूल्यो की प्रतिष्ठा करना है। अशुभ से निवृत्त कर मानव को आदर्शों के प्रति आस्थावान और मानवता के प्रति सवेदनशील बनाना है। कहानी कहानी नही, जीवन के प्रति समर्पण है।

आगम युग से लेकर आज तक कथा साहित्य विपुल मात्रा मे लिखा गया। हा, युग-परिवर्तन के साथ-साथ कथा के स्वरूप एव शैली मे अवश्य परिवर्तन आया।

आगमिक कथायें आकार म लघु तथा विशेष तथ्य को लेकर चलती है। प्रसग के अनुरूप उपदेश के बीच-बीच मे उनका कथन होता था। धीरे-धीरे इस शैली मे परिवर्तन आया। रामायण, महाभारत की शैली से प्रभावित हो, कवियो ने पौराणिक-शैली को अपनाया। फलत चरित्र ग्रथो का निर्माण हुआ। मूलकथा के साथ प्रासगिक अन्य कथाओ, विविध वर्णनो एव पूर्वभवो की घटनाओ को जोडकर उसे विशेषाकार देना इस शैली की विशेषता है। आदिनाथ चरित्र, शान्तिनाथ चरित्र, पार्श्वनाथ चरित्र, त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र आदि इसी शैली के उदाहरण है।

आख्यायिका-शैली मे भी अनेक मननीय कथा ग्रन्थो की रचना हुई। पादलिप्तसूरि की तरगवतीकथा, हरिभद्रसूरि की समराइच्चकहा, जिनेश्वर-सूरि की लीलावतीकथा, उद्योतनसूरि की कुवलयमाला कहा आख्यायिका शैली की प्रमुख रचनायें हैं।

शब्द-कोष की तरह, कथा-कोषो की भी रचना हुई इनमे विभिन्न विषयो पर उपदेशात्मक छोटी-छोटी कथाओ का अच्छा सग्रह मिलता है। जिनेश्वर सूरि रचित कथा कोष, धर्मदासगणि कृत उपदेश-माला, शुभवर्धन गणि की वर्धमानदेशना आदि इसी कोटि की रचनायें हैं।

आज भी अनेक विद्वान् लेखक प्राचीन-कथाओं, किसी महापुरुषके जीवन या जीवन गत किसी एक प्रसंग को लेकर अथवा जन-जीवन में व्याप्त अशुभ की निवृत्ति एवं शुभ की सत्प्रेरणा हेतु कल्पना प्रसूत अनेक कथाओं का सृजन कर कथा साहित्य को अधिकाधिक समृद्ध बना रहे है।

भाषा की दृष्टि से कथायें समयानुसार अनेक भाषाओं मे लिखी गई है। प्राचीन काल में बोलचाल की भाषा प्राकृत होने के कारण ग्रंथों की रचना प्राकृत में होती थी। कथायें भी प्राकृत में लिखी गई। जब साहित्यिक भाषा के रूप में संस्कृत का प्रचार-प्रसार बढ़ा तो कथाग्रंथों की रचना संस्कृत मे होने लगी। फिर अपभ्रंश युग आया तो कथायें अपभ्रंश मे लिखी गई। लोक सुगमता से समझ सके इसलिये प्रान्तीय भाषायें—जैसे गुजराती, गुजराती मिश्रित राजस्थानी, हिन्दी आदि में कथा ग्रंथों का अच्छा सृजन हुआ। आज मुख्य रूप से गुजराती और हिन्दी मे जैन कथाओं का विपुल मात्रा मे लेखन हो रहा है। प्रौढ एवं सिद्धहस्त लेखकों के अतिरिक्त कई युवा प्रतिभायें इस क्षेत्र मे कार्यरत है।

जहाँ तक गद्य-पद्य का सवाल है कथाओं का गुम्फन दोनो शैलियों मे हुआ। गद्य-पद्य और उभयात्मक (चम्पु) कथायें पूर्वोक्त सभी भाषाओं में सैकड़ों की संख्याओं मे आज उपलब्ध है।

मध्ययुगीन जन-भावनाओं को ध्यान में रखते हुए तत्कालीन विद्वान् कवियों ने कथाओं का गुम्फन विविध राग-रागिणियो एवं देशियों मे किया जो रास चौपाई आदि के नाम से प्रसिद्ध है। ये रास एवं चौपाइयां बड़े ही लोकप्रिय एवं उपदेश देने मे उपयोगी सिद्ध हुए। लगता है उपदेश की यह शैलीजैनों ने वैष्णव सन्तों से ग्रहण (Adopt) की हो। वैष्णव सन्त भक्ति की मस्ती में जब अपने तम्बूरे पर तान छेड़ते थे, हजारों लोगो की भीड़ इकट्ठी हो जाती थी और भक्ति की मस्ती मे सभी झूम उठते थे।

यह उपदेश पद्धति उस समय में खूब ही लोकप्रिय एवं उपयोगी सिद्ध हुई। राग-रागिणी, शब्द-स्वर एवं व्यक्तित्व का प्रभाव हृदय को गहराई

से छू लेता है। हृदय को आवर्जित एव भावो को तन्मय कर देने की जो शक्ति सगीत मे है, अन्य किसी मे नही। इसीलिए उपदेशको ने अपने उपदेश को आकर्षक एव प्रभावशाली बनाने हेतु इस पद्धति को अपनाया।

यद्यपि आज समय, विचार और पसदगी के बदलने के साथ उपदेश की यह पद्धति समाप्त सी हो गई है। तथापि इसका सर्वथा अभाव नही हुआ है। आज भी कई सप्रदायो मे इस शैली का अच्छा प्रचलन है। प पू प्रज्ञापुरुष प्रसिद्धवक्ता गुरुदेव श्रीजिन कान्तिसागर सूरीश्वरजी म सा भी इसी शैली के पुरस्वर्ता थे। आधा पौन घण्टे के अपने मार्मिक प्रवचन के बाद 10 मिनट अजना, मयरण रेखा आदि सतियो के जीवन प्रसगो का वर्णन करके जीवन की वास्तविकता एव यथार्थता का बोध श्रोताओ को इसी शैली मे कराते थे। गुरुदेव के सुधा मधुर कण्ठ से जब स्वर-लहरी फूटती थी श्रोताओ के हृदय के तार झनझना उठते थे। श्रोतागरण मस्ती मे झूम उठते थे। आचार्य श्री के स्वर के साथ हजारो कण्ठो से निसृत स्वर जुड जाता था और समूचा वातावरण सगीतमय बन जाता था। उसका प्रभाव मन मस्तिष्क पर इतना गहरा होता था कि सैकडो लोग जीवन की वास्तविकता का बोध पा, नये सिरे से जीवन जीने को कृतसकल्प हो जाते थे। अजना रास, मदन रेखा रास गुरूदेव की स्वय निर्मित कृतिया है।

इस शैली की सबसे प्राचीन रचना है भरतेश्वर बाहुबली रास जो कि १२४१ मे शालिभद्र सूरिजी द्वारा लिखी गई थी। उसके बाद तो कई बड़े-बडे रास एव चौपाईया लिखी गई।

प्रस्तुत कथा

प्रस्तुत ऋषिदत्ता कथा मूलत जैन पुराणो में है। यह कथा 'इसिदत्ता चरिय' के नाम से प्राकृत मे भी है। इसकी रचना ९-१० वी शताब्दी मे 'गुणपाल' मुनि ने की थी। सस्कृत मे कवि आह्डकृत, विवेकमजरी मे श्लोकबद्ध ऋषिदत्ता का लघु कथानक है। ऋषिदत्ता पुराण और आख्यान के

रूप में भी कई रचनायें है। ऋषिदत्ता के विषय में आज तक उपलब्ध और कृतियों की संख्या २८-२९ है। इनमें सबसे प्राचीनतम कृति 'लालविजय जी' द्वारा रचित है, जो १६५९ में खंभात में लिखी गई थी। उसके बाद तो ढेर सारी कृतियां लिखी गई। यह कथा औपन्यासिक शैली में भी लिखी गई जिसके लेखक हैं गुजरात के जाने माने कथाकार मोहनलाल चुन्नीलाल धामी। वह अपने ढंग का निराला कथाग्रन्थ है।

इस कथा में पात्रों की उदात्तता, प्रेरणा शीलता, नारी के प्रेम की असीमता, द्वेष पर प्रेम, वैर पर क्षमा की अद्भुत विजय का चित्रण बड़ा ही सुहाना और मनोवैज्ञानिक है। लगता है इन्ही सब के कारण यह कथा जैन कवियों और लेखकों को बड़ी प्रिय है।

प्रस्तुत कथा राजकुमार कनकरथ और ऋषिकन्या ऋषिदत्ता के पवित्र प्रेम की अद्भुत कहानी है। राजकुमार कनकरथ कावेरी की राजकुमारी रूक्मिणी को ब्याहने जाता है। राह में राजर्षि और उनकी पुत्री ऋषिदत्ता से उसकी भेंट हो जाती है। एक दूसरे को देखते ही वे एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो जाते है, हृदय से चाहने लगते है। ऋषि उनकी मनोभावनाओं को समझकर शादी का प्रस्ताव रख देते है। आखिर दोनों की शादी हो जाती है। ऋषि जैसी सुन्दरी, सुरूपा और सद्गुणी पत्नी को पाकर 'एका नारी सुन्दरी वा दरी वा' मे विश्वास रखने वाला राजकुमार वहीं से अपने नगर लौट आता है। यह सुनकर रूक्मिणी के कोड़ भरे दिल को गहरा आघात लगता है। ऋषि को अपने राह का कांटा मानकर उसका हृदय प्रतिशोध की आग में जल उठता है। वह येन-केन-प्रकारेण ऋषि को उखाड़ फेंकना चाहती है। उसे सहसा सहयोगिनी के रूप में सुलसा मिल जाती है। सुलसा अपनी मैली विद्याओं के प्रयोग से निरपराधिन ऋषि को कलंकित कर मौत के मुंह में धकेलवा देती है किन्तु पुण्ययोग से ऋषि मरती नहीं है और पुनः पिता के आश्रम में पहुंच जाती है। इधर राजकुमार निर्दोष निष्कलंक पत्नी के वियोग से व्याकुल हो मरने को उतारू हो जाता है,

परन्तु माता का असीम वात्सल्य उसे रोकता है। वह ऋषि को एक क्षण नहीं भूलता। पुन रुक्मिणी की शादी का प्रस्ताव आता है। राजकुमार केवल माता-पिता की सन्तुष्टि के लिये बेमन से शादी करने जाता है। आश्रम मे फिर पुरुषवेशधारी ऋषिकुमार से उसकी भेंट होती है। उससे मिलकर राजकुमार को ऐसा महसूस होता है, मानो ऋषिदत्ता ही मिल गई हो। राजकुमार उसे आग्रह कर अपने साथ कावेरी ले जाता है। वहा राजकुमार रूकमणी की शादी हो जाती है। अपनी सफलता के गर्व मे सब कुछ भूलकर रूकमणी प्रथम मिलन मे ही ऋषिदत्ता के प्रति अपनी ईर्ष्या उगलती है। ऋषिदत्ता की विडम्बना के लिये रुक्मणी को दोषी जान राजकुमार क्रोध, घृणा और आत्मग्लानि से भर जाता है। उसे अब जीना भी अच्छा नही लगता। वह अग्नि प्रवेश कर अपने आपको समाप्त कर देना चाहता है। एन मौके पर ऋषिकुमार अपने असली रूप मे प्रकट हो, राजकुमार को बचा लेता है। ऋषि का सर्वाधिक उज्जवल रोमाचक एव मोहक व्यक्तित्व यहा देखने को मिलता है। वह राजकुमार को, रूकमणी का सारा अपराध भुलाकर, स्नेह की सहभागी बनाने को प्रेरित करती है। यह ऋषिदत्ता के जीवन की अमर ज्योति है जो युगो-युगो तक उसे 'दीपशिखा' बनाये रखेगी।

प्रस्तुत रास का उद्भव

बात वि स २०४० की है। सिवाना का ऐतिहासिक शताब्दी महोत्सव दीक्षायें एव गुरुदेव की प्रतिष्ठा का कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न कर पू गुरुदेव श्री जिन कान्ति सागर सूरीश्वर जी म सा मन्दिर दादावाडी के शिलान्यास हेतु मोकलसर पधारे। करीब १ सप्ताह वहा विराजे। हम लोग भी वहा इसी कार्य हेतु आये हुए थे। प्रतिदिन गुरुदेव के प्रवचन होते थे। प्रवचन के अन्त मे १० मिनट शक्ति स्वरूपा नारी के समृद्ध रूप का प्रतिनिधित्व करने वाली लक्ष्मी की कहानी, गेय रूप मे फरमाते थे। जब वे गाते थे श्रोता तन्मय हो जाते थे। कुछ दिन पूर्व ही मैंने प्रसिद्ध लेखक धामी द्वारा लिखित "ससार चाल्यो जाय छे" (ऋषिदत्ता) पढी थी। मुझे प्रेममूर्ति ऋषिदत्ता मे स्फटिकवत

निर्मल चरित्र एवं मृदु-विनम्र स्वभाव ने बहुत ही आकृष्ट किया था। विचार आया, कितना अच्छा हो यदि आचार्य श्री इस कथा को प्रसिद्ध रागों मे गूंथ दे। जेठ वदी ३ का प्रभात ठण्डी हवा चल रही थी। वातावरण बड़ा सुखद था। गुरुदेव श्री प्रसन्न मुद्रा मे पाट पर विराजे हुए थे। साध्वी मण्डल वन्दन हेतु आया हुआ था। वन्दना के पश्चात् चर्चा के दौरान मैने निवेदन के स्वर में कहा 'गुरुदेव' मेरी तात्र अभिलाषा है कि आप 'ऋषिदत्ता' रास अवश्य लिखें। प्रसिद्ध रागों मे आपके द्वारा लिखित महासती का यह रास बड़ा ही उपयोगी होगा। गुरुदेव ने मेरी भावना का आदर करते हुए स्वीकृति के स्वर मे कहा 'अवश्य प्रयास करुंगा।' किन्तु गहरा दुख है कि गुरुदेव के हाथों यह कार्य सम्पन्न न हो सका। किस्मत महरबान न होने से इच्छा पूरी न हो सकी। सोचा हुआ स्वप्न बनकर रह गया। लेकिन यह हकीकत है कि सच्ची भावना एक दिन अवश्य फलती है। उस रूप में तो इच्छा पूरी नहीं हुई, किन्तु रास की रचना अवश्य हो गयी। मैं तो इसे पू. गुरुदेव के वात्सल्य का ही प्रतिफल मानूंगी।

इस रास के रचयिता है प. पू. गुरुदेव के प्रधान शिष्य बहुमुखी प्रतिभा के धनी, ज्योतिर्विद् कवि हृदय, प. पू. मणिप्रभ सागर जी म.सा.। उनके बारे में कुछ कहने की अपेक्षा उनके कृतित्त्व से उन्हें समझना अधिक उपयुक्त एवं यथार्थ होगा।

प्रस्तुत कृति

प्रस्तुत रास पू. मुनि श्री ने गत चातुर्मास मे पालीताणा तीर्थ में रचा। जैसा कि रास के अन्त में उन्होंने स्वयं ने इसका उल्लेख किया है। सम्पूर्ण कथा भाग ९ ढालों मे विभक्त है। प्रथम ढाल से पूर्व ७ दोहे तथा शेष ढालों से पूर्व एक-एक दोहा है। कुल मिलाकर १६ दोहे और १०५६ गाथाओं में यह रास पूर्ण होता है। ढालें इतनी प्रसिद्ध रागों में है कि साधारण लोग भी इसे आसानी से गा सकते है, ९ ढालें तीन रागों में है। १-३-४ और ५वी ढाल की प्रसिद्ध और प्रिय राग "मासू मूंडे बोल" है। २ ढाल ऊंची

और पहाड़ी राग "भीनासर स्वामी" मे है। शेष चार ढालें ६-७-८ और ९ की गगा जल की तरह कल-कल बहती मधुर प्रवाह युक्त राग "पावन पुरुषोत्तम भगवान" है।

काव्य प्रतिभा

रास मे मुनिश्री की कवित्व-शक्ति का अच्छा दर्शन हो जाता है। तथा उनकी काव्य प्रतिभा की मौलिक विशेषतायें सामने आती है। घटना एव भावो की अभिव्यक्ति हृदय को छूने वाली है। मानवीय भावनाओ, सवेदनाओ एव पारस्परिक सबधों का इतना सहज स्वाभाविक वर्णन है कि इसे पढते-पढते रामायण के पात्र सजीव हो उठते हैं। सुख-दुख की सवेदनाए मोह, प्रेम, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा की भावनायें सयोग-वियोग की अवस्थाए, स्वार्थ, परार्थ की वृत्तिया किस तरह आकार लेती है और उस समय मानव मन का क्या रूझान होता है और मानव उस समय क्या कर गुजरता है इसका सजीव और वास्तविक चित्रण इस रास मे है। प्रकृति के हृदयग्राही वर्णन के साथ उनकी स्वाभाविक क्रियायें—जैसे फूलो का खिलना विकसना आदि मे मानवीय भावनाओ का आरोपण, सौन्दर्य का सवर्धक है। फूलो के स्वाभाविक खिलने का वर्णन देखिये—

> हरियाली चो तरफ बिछाई, प्रकृति ने उस वन मे रे।
> फूल-फूल की बातें सुनते, हस जीवन मे रे॥

वन की शोभा का वर्णन कितना स्वाभाविक है--

> भोले-भाले मृग छौने ये करते इत-उत क्रीडा रे।
> उडते रग-बिरगे पछी, हरते पीडा रे ॥

सहज होने वाली क्रियाओ एव घटनाओ के माध्यम से आत्मा को जगाने की कला देखिये—

> कल-कल करते बहते झरने, कहते जग है अस्थिर रे॥
> मुक्त नही मैं मुक्त नही तुम, दोनो ही है बन्दी रे।
> कर्मों से जो मुक्त वही, आत्मा स्वच्छदी रे॥

राजकुमार और ऋषि के सहज-स्नेह का संयत किन्तु सारगर्भित वर्णन बड़ा ही संवेदक है।

राजकंवर ने ऋषिदत्ता की ओर निगाहें डाली रे।
ऋषि नैनों से पिला रही है, अमृत प्याली रे ॥

इस पर ऋषिराज की सूझ-बूझ कितनी उपयुक्त है--

प्रणयाधीनो के नयनो को राजर्षि ने झाका रे।
प्रेम भावना समय सभी को, जावे आंका रे॥
ऋषि को तुम्हें सौपता हूं मैं, भेंट यही स्वीकारो रे॥

ऋषि की शादी के वाद राजर्षि की मनोव्यथा और ऋषि को राजकुमार के हाथों सौपते समय उनके मुंह से निकले उद्गार अभिज्ञान शाकुन्तलम् के कण्व ऋषि की याद दिलाये बिना नही रहते।

रास को पढने से मालूम होता है कि ऋषिदत्ता वास्तव में आदर्श प्रेम की प्रतिमा है। वह हर समय, जीवन के हर मोड़ पर, हर व्यक्ति के साथ तो उसका प्रेम वेमिशाल है ही किन्तु रूक्मिणी जैसी घोर अपराधिन के लिये भी उसके हृदय में स्नेह का निर्झर कलकल वह रहा है। वह अपने प्रेम के पवित्र गंगाजल मे रूकमणी के सारे अपराध धोकर उसे उज्ज्वल वना देती है। यह जानते हुए भी कि उसके दुख, कष्ट का मूल कारण रूक्मिणी है, अति प्रेम और राजकुमार को उसे स्वीकारने के लिये प्रेरित करना उसके प्रेममूर्ति होने का सवूत है।

प्यार रूक्मिणी को दे उतना जितना मुझको देते।
वहुत हर्ष होगा मेरे मन, वस इतना सा लेते॥

राजकुमार रूकमणी जैसी स्वार्थी क्रूर नारी से प्रेम करने की वात कभी सोच ही नहीं सकता। वह उससे घोर नफरत करता है, उसे ऋषि की वात पर विश्वास नही होता किन्तु ऋषि स्पष्ट कह देती है कि

प्यार आपका पाने का, जितना मेरा अधिकार।
उतना ही बस उसे मिले, यह आप करो स्वीकार॥

ऋषि को मानवीय भावनाओं में पूर्ण आस्था है। वह जानती है कि प्रेम कभी जबरन नहीं हो सकता यह दिल की चीज है। जब तक राजकुमार के मन में रूक्मिणी के प्रति रोष है, वह उसे प्रेम नहीं दे सकता। उस के प्रति राजकुमार के मन में स्नेह का अंकुर तभी फूट सकता है। या तो वह अपने आचरण से राजकुमार के दिल को जीते। या राजकुमार चिन्तन द्वारा अपना रोष खत्म करे। इसलिये वह दोनों ओर पूरा प्रयास करती है। राजकुमार को ज्ञान की बातें समझाती है और रूक्मिणी को माफी मांगने के लिये तैयार करती है।

पापोदय से बुरे कर्म कर लेता है हर कोई।
मिलती क्यों न वस्तुएं वापिस, गई कहीं हो खोई॥

दया पात्र है प्रेम पात्र है, उसे क्षमा दें आप।
पापी से पापी मानव भी, करता नित्य न पाप॥

प्रेम में वह ताकत है, जो हिंसक पशुओं को भी शांत बना देता है तो रूक्मिणी तो आखिर कोमल हृदया नारी थी। ऋषि के प्यार ने उसके हृदय को पानी-पानी कर दिया।

ऋषि ने उसे बाहुओं में भर उठा लिया है ऊपर।
रूक्मण के आंसू गिरते ज्यों गिरता गिरि से निर्झर॥
मैं अपराधिन मैं हत्यारिन, मैं पापिन मैं डायन।
मुझसे मिलने को क्यों आई तुम हो भगिनी पावन॥
तुम देवी मैं हूं राक्षसणी कहकर के रोती है।
ऐसी ही हालत होती है जब गलती होती है॥

पश्चाताप की आग में अपना सारा कलिमल खाक कर रूकमण भी खरा सोना बनकर राजकुमार के प्रेम की अधिकारिणी बन गई।

परिस्थितियों के साथ पूर्ण सामंजस्य करके चलना ऋषि के जीवन की अद्वितीय विशेषता है। जहां राजकुमार दुख से घबराकर मरना चाहता है, वहां नारी होकर भी ऋषि, घबराती नहीं, प्रत्युत पूर्ण साहस के साथ परिस्थितियों का सामना करती है। उसके शब्दों में उसके कार्यों में ज्ञान-विवेक एवं साहस टपकता है। यह उसके विशुद्ध प्रेम की ताकत है। शक्ति है। यह कनकरथ के व्यक्तित्व पर उसके व्यक्तित्व की अपूर्व विजय है।

वास्तव में ऋषिदत्ता का मन गंगा की तरह पवित्र हृदय सागर की तरह गहरा तथा चरित्र हिमालय की तरह ऊँचा था।

लम्बी कहानियां कई घटनाओं को लेकर बनती है। लेखक एवं कवि के लिए सबसे कठिन बात होती है, दो घटनाओं को जोड़ना उन्हें इस तरह जोड़ना कि कथा के प्रवाह में जरा सा भी अन्तर न आये। इस कला में मुनिश्री बड़े माहिर, दक्ष व निपुण है। उन्होंने घटनाओं को इस तरह जोड़ा कि परिवर्तन का आभास पाठक को जल्दी से नहीं होता। वे प्रवाह (Flow) में बहता जाता है।

वर्णन के साथ व्यावहारिक क्षेत्र से संचित-उपमान, संवादों में अपने-अपने कथन की पुष्टि हेतु दिये गये उदाहरण इतने सटीक है कि पढ़ते ही बनता है।

नृप ने आज्ञा दी मंत्री को, पुर से इन्हें निकालो रे।
जो सीजे ना धान्य उसे क्यों व्यर्थ उबालो रे॥

* * *

जीवित रहने पर शायद वो, मिल जाए ऋषिदत्ता।
ऋषि। क्या? टहनी से जुड़ सकता पका गिरा जो पत्ता॥

कहीं-कहीं पर दिये गये दार्शनिक एवं शास्त्रीय उदाहरण उनके गंभीर ज्ञान के द्योतक है—

श्वांस वहीं का वही रूक गया, रूकमण का भी भय से।

विभक्तियां रूक जाती है, जब काम पडे अव्यय से। जीवन के नग्न-सत्यों का उद्घाटन, मानव को गंभीर चिन्तन के लिये प्रेरित किये विना नहीं रहता। मानव स्वभाव का सूक्ष्म-विश्लेषण मुनिश्री की मनोवैज्ञानिक निपुणता का प्रतीक (Symbol) है।

बेटे मन की स्थिति एक-सी रही नही रह पाती रे।
आज द्वेष कल प्यार करे स्थिति पलटा खाती रे॥

ऋषि के पुनर्मिलन की आशा में प्रतीक्षारत राजकुमार के मानसिक उतार-चढ़ाव का वर्णन देखिये।

अनहोनी आकांक्षाओं में लेते सांस उफान।
अणु-अणु में बस मचा हुआ है, एक बड़ा तूफान॥
इन्तजार वाली घड़ियो मे जो होता आनन्द।
वो अस्सीम अनंत उसे क्या, बांध सकेगा छन्द॥

रोया-रोया महक उठा ज्यो, महके रजनीगधा।
गोरखनाथ सिवा क्या जाने, मन का गोरख धधा ॥

ऋषि के स्वागत मे पलक-पावडे बिछाये बैठे राजकुमार की वेमब्री देखिये—

टोह मोरनी की करता है, मोर मचाकर शोर।
मोहोदय से बन जाता है, सबका मन कमजोर॥

भाषा शैली

सन्तो की रचना को भाषा की कसौटी पर कसने से पूर्व कुछ बातो का ध्यान रखना अति आवश्यक है। सन्त भ्रमणशील होते हैं। वे भिन्न-भिन्न देशो और गावो मे भ्रमण करते हैं। उनका जन-सम्पर्क विस्तृत होता है। अत लोकभाषा का प्रभाव उनकी भाषा पर पडना स्वाभाविक है। प्रस्तुत कृति के विषय मे भी यही बात है।

कर्त्ता की मातृभाषा राजस्थानी है। हिन्दी-सस्कृत-प्राकृत एव अग्रेजी के आप अच्छे विद्वान् है। विहार-क्षेत्र आपका विस्तृत होने से अन्य भाषा का ज्ञान भी बढता गया। जिसका प्रभाव उनकी कृतियो मे देखने को मिलता है। प्रस्तुत कृति हिन्दी मे होते हुए भी धमीडा हरखो दर्द-दरिया, नेक-नजारा, मुबारक साचा, जोडला, सेरी आदि मारवाडी, उर्दू एव गुजराती शब्दो का यत्र-तत्र प्रयोग इसी बात का परिचायक है।

अनुप्रास का प्रयोग वातावरण मे सगीत पैदा करता है किन्तु कही-कही पर हठात् अनुप्रास लाने का प्रयास तुकबन्दी सा लगता है।

सन्त कवियो का ध्येय पाण्डित्य-प्रदर्शन या सस्ती वाह-वाह लेने का नही होता, किन्तु जन-साधारण उनकी बात समझे एव जीवन को समुन्नत बनाने की सत्प्रेरणा प्राप्त करे, यह होता है इसके लिये अल्प और अनुरूप शब्दो मे कहना उपयुक्त होता है। प्रस्तुत रास मे विषय मे यही बात है। मुनिश्री ने अपनी बात सरल-भाववाही भाषा मे और सुबोध-शैली मे प्रस्तुत की हैं। अनर्थक अलकरण और पाडित्य प्रदर्शन के झूठे मोह मे भावो की गरिमा कम करने की कही भी नही की।

ऋषिदत्ता की कथा, मानव जीवन को समझाने और बनाने की सुगम सीढी है। इसे पढकर यदि जीवन मे प्रेम की ज्योति न जली, जीवन के उपवन मे क्षमा के पुष्प न खिले तो इस कहानी को पढने का कोई सार न होगा न जीवन जीने का आनन्द ही आयेगा।

अपनी बात

बात वि. सं. 2040 की है। सिवाना का ऐतिहासिक महोत्सव सम्पन्न करा कर पू. गुरूदेव, मन्दिर दादावाड़ी के शिलान्यास हेतु मोकलसर पधारे हुए थे। साध्वी श्री हेमप्रभाश्री जी ग्रादि भी वही ग्राये हुए थे। प्रतिदिन गुरूदेव के प्रवचन होते थे। मधुरवाणी, तात्विक विश्लेषण, व्यावहारिक परिवेश, प्रसंगानुकूल दृष्टान्तों, रूपकों एवं उदाहरणों के सामंजस्य के कारण पू. गुरूदेव श्री के प्रवचन इतने प्रेरक, रोचक व ग्राकर्षक होते थे कि सैकड़ों व्यक्तियो की भीड़ उन्हे सुनने, खिची-खिची चली ग्राती थी। उनकी गेय शैली उनके प्रवचन को इतना अधिक ग्राकर्षक बना देती थी कि श्रोता झूम उठते थे।

प्रभात का समय था। वातावरण बड़ा सुखद एवं सुहावना लग रहा था। पू. गुरूदेव श्री प्रसन्न मुद्रा में, पाट पर विराजे हुए थे। मैं गुरूदेव श्री के चरणों मे बैठा हुग्रा था। क्षमणी वृन्द वन्दन हेतु ग्राया हुग्रा था। पू. गुरूदेव श्री के प्रवचन की चर्चा के दौरान साध्वीजी हेमप्रभा श्री जी ने निवेदन किया कि गुरूदेव ! यदि ग्राप ऋषिदत्ता रास, प्रसिद्ध रागो में बनादें तो उसकी उपयोगिता मे चार चांद लग जायेंगे। मैने साध्वीजी के निवेदन का ग्रनुमोदन किया। प्रकृति के गर्भ मे क्या निहित है, मनुष्य नही जान पाता। मुझे क्या मालूम था कि जिस बात का मैं ग्रनुमोदन कर रहा हूं, वह मुझे ही पूरी करनी होगी।

पालीताणा मे ज्योही 'ऋषिदत्ता रास' लिखने बैठा मन अतीत की स्मृतियो मे खो गया। आखे शून्य मे टिक गई। एक के बाद एक घटनायें फिल्म की तरह सरकती गई। हर घटना हृदय के जख्मो को गहरा कर गई। जिनके चरणो मे मेरे जीवन के तेरह बसन्त बीते थे। जिनके साथ मेरे जीवन के पल पल क्षण क्षण के संस्मरण जुडे हुए थे। जिनके कारण सारा अमन चैन था उन गुरुदेव के विछोह की तडफन से शरीर का रोया-रोया जल उठा। मेरे नेत्रो से चुपचाप आसू ढुलक पडे। पर उन्हें पोंछने वाले वे कोमल वरद हाथ कहाँ ? दिल पुकार उठा, गुरुदेव, मुझे रोता बिलखता छोड कहाँ गये ? अब कहा पाऊगा वह शीतल चरण छाया जहाँ बैठकर मुझे असीम शाति और तृप्ति मिलती थी। कहाँ से लाऊगा वह गोद जिसमे मुह ढापकर एक पल मे ही सारा गम-रज भूल जाता था। हृदय काप गया। कलम थम गई। कल्पना कुण्ठित हो गई। शब्द भीतर ही रह गये। घण्टो बीत गये सोचो मे

इतने मे कल्पना मे अवतरित प्रेममूर्ति ऋषिदत्ता मुस्कुराती हुई कहने लगी। अपने हृदय को मजबूत करो, सत्य को समझो। जो जाने वाला है जायेगा। जो मरणशील है मरेगा। उसके प्रति तुम्हारा मोह उचित नही। अगर तुम्हें प्रेम करना ही है तो अमर आत्मा से प्रेम करो। वह हर क्षण हर पल तुम्हारे समीप है। उनकी आत्मिक शक्तियो को आत्मसात् करने का प्रयास करो। साहस और विवेक पूर्वक सयम जीवन मे आगे बढते रहो। आखिर विजय तुम्हारे हाथ है।

एक झटके मे ही मेरी विचार तन्द्रा टूट गयी। मैं आश्वस्त हुआ। अन्तर्द्वन्द समाप्त हो गया। मैं यथार्थ के धरातल पर उतर आया। मेरे सम्मुख ऋषि के जीवन के एक के बाद एक प्रसग उभरते चले गये। ऋषिदत्ता का जीवन वास्तव मे दर्द का दरिया था। हर समय आसुओ का सैलाब उसकी आखो से बह रहा होगा। किन्तु उसका हर कदम हर निर्णय हर कार्य साहस

और विवेक से पूर्ण था। विषम से विषम परिस्थिति में भी उसका साहस नही मरता और विवेक की ज्योति नहीं बुझती। यही उसके जीवन की सफलता का एवं विजय का राज था।

वास्तव में मानव जीवन एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। उसका अपना लक्ष्य है, उद्देश्य है। विरले ही मानव उसे जान पाते है। अपने जीवन में उसे साकार कर सार्थक और कृतार्थं बना पाते है। जीवन सुख-दुख की आंख-मिचौनी, खुशी और गम की धूप छांह, मिलन की बहारें और बिछुड़न के पतझड़ के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। किन्तु जो फूलों और शूलों दोनों को समान रूप से स्वीकार करते है, दोनों में समभाव रखते है उनका जीवन आग मे रखे सोने की तरह निखरता है। वे दुगुनी चमक-दमक पाते है। उनका जीवन गौरवान्वित, महिमामण्डित होता है। वे दुनिया के आदर्श, श्रद्धेय और समादरणीय बनते है। सुख की अपेक्षा दुख जीवन की वह कसौटी है जो जीवन के खरे खोटेपन को नीर क्षीर की तरह विविक्त कर देता है। दुःख की कसौटी पर वे ही खरे उतरते है जो सौ टंच के स्वर्णसम होते है। दुख यदि नहीं आता तो मानव महान् ही नही होता। दुर्जन यदि नहीं होते तो सज्जन की पहचान ही क्या होती ? अमावस्या के कारण ही तो पूनम का महत्व है। अन्धेरा है तो ही प्रकाश की खोज होती है। राहुग्रस्त होने पर ही चन्द्रमा की वेदना जन मानस को व्यथित करती है। उसकी मुक्ति के लिये लोग तप-त्याग-दान-पुण्य करते है। ऋषि की कहानी इन्हीं सब सत्यो का साकार चित्रण है। जिनमें उसके जीवन की उदारता, सहिष्णुता, त्याग-संतोष-दया-प्रेम, समर्पण भाव, धीरता-गम्भीरता, क्षमा, धर्मप्रेम आदि सद्‌गुणों की मणियाँ पग-पग पर चमकती नजर आती है। जिसका प्रकाश समूची मानव जाति को दिशा दर्शन करता है।

इस रास को लिखने में पू. गुरुदेव श्री के असीम....अनंत....अमृत मय आशीर्वाद ही निमित्त बने है। उनकी असीम कृपा के सहारे ही कलम चल सकी।

साध्वी श्री हेमप्रभा श्री जी को पू गुरुदेव आचार्य श्री द्वारा दी गई स्वीकृति, मेरे द्वारा पूर्ण हो रही है, यह हर्ष विषाद का मिश्रित अनुभव है।

इसके लेखन मे मुझे मिले मेरे छोटे गुरुभाई प्रिय मुनि मुक्तिप्रभसागर के के सहयोग का मूल्यांकन कर मैं उसके महत्व को कम नहीं करना चाहता। बस इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि उसकी सेवा एव सहयोग के बिना यह कार्य सपन्न होना कठिन था।

बहिन साध्वी विद्युत्प्रभा के आग्रह को भुलाया नहीं जा सकता, जिसके आग्रह के कारण यह लेखन शीघ्र सपन्न हो सका।

विदुषी आर्यरत्न श्री हेमप्रभा श्री जी ने इसे आद्योपात पढा और सम्पादित कर इसे नया निखार दिया।

इन सभी के अपनत्व भरे सहयोग के कारण यह सपन्न हो सका है। सभी के प्रति आभार ज्ञापित कर मैं उऋण होना नही चाहता।

—मुनि मणिप्रभसागर

ऋषिदत्ता रास

दोहा

श्री वामांगज देव की पद कज रज शिर चाढ ।
सहज सुगुण श्रेणी चढूँ मेघ यथा आषाढ ।।१।।

श्री दादा गुरूदेव का शरण ग्रहण कर सद्य ।
पावन मन रचना करूँ श्रेष्ठ कथानक पद्य ।।२।।

सुखसागर श्री जिन हरि श्री जिन कान्ति विशेष ।
मणि प्रभसागर शिष्य पर करूणा करे हमेश ।।३।।

उपजे सुन कर अरूचि जो तो वह क्या विस्तार ।
अर्थ हीन संक्षिप्तता दे न सके जो सार ।।४।।

ऋषिदत्ता की शुभ कथा प्रेम शील भण्डार ।
मानो दरिया दर्द का शिक्षा अपरम्पार ।।५।।

अन्य स्त्रियों सी स्त्री न जो सबसे बिल्कुल भिन्न ।
इसने होने दी नहीं परम्परा विच्छिन्न ।।६।।

पाठक श्रोता प्रेम से पढे सुने दे ध्यान ।
रस बरसाने के लिये साथ करें संगान ।।७।।

ढ़ाल पहली

तर्ज—मा सू मू डे वोल

सुनो भवि वाणी रे, धर्म निभाने वाली
ऋषि को धर्म कहानी रे ।।टेर।।

रथमर्दनपुर भूप हेमरथ, सुयशा सुन्दर रानी रे ।
पुत्र कनकरथ एक लाडला, अति पुनवानी रे, सुनो० ।।१।।
उगते सूरज के सपने से, पुत्र गर्भ मे आया रे ।
सस्कारो की लोरो दे दे, इसे सुलाया रे, सुनो० ।।२।।
नही धाय माता का, माँ ने अपना दूध पिलाया रे ।
जब भी रोते देखा तब आ, गले लगाया रे, सुनो ।।३।।
वचपन वचपन ही होता है, भले किसी का होवे रे ।
वादशाह का सुत हो तो क्या, कभी न रोवे रे, सुनो० ।।४।।
शिशु को माँ का प्यार चाहिये, वो माँ से ही मिलता हे ।
सूरजमुखी कमल सूरज के, कर से खिलता हे, सुनो० ।।५।।
जैसे वचपन वीता शिक्षा, ऊँची गई दिलाई रे ।
प्रथम मातृदेवो भव की शुभ, कडी पढाई रे, सुनो० ।।६।।
माँ के पास वैठता उठता, खुलकर बाते करता रे ।
नही पिता से अधिक वोलता, रहता डरता रे, सुनो० ।।७।।
जो होते हम उम्र उन्ही के, साथ मित्रता होती रे ।
अधेरे से करे मित्रता, वो क्या ज्योति रे, सुनो० ।।८।।

होने दे अपवित्र नहीं जो, वो है मित्र सुहाना रे।
व्यसन बुराई सिखलाए वो, दुश्मन माना रे, सुनो० ॥९॥

मंत्री नगरसेठ सेनापति, राजपुरोहित जाया रे।
नृप सुत के ये चार मित्र हैं, प्रेम सवाया रे, सुनो० ॥१०॥

राजनीति में परम निपुणता, राजकुँवर ने पाई रे।
बात हारने की न कहीं जो, लगे लडाई रे, सुनो ॥११॥

विद्वानों की बडी गोष्ठियाँ, राजसभा में होती रे।
तात्त्विक चर्चाओं से चुनता, चिन्तन मोती रे, सुनो ॥१२॥

विद्वानों का आदर करना, ऐसे सीखा जाता रे।
जिसने देखा नहीं उसे क्या, करना आता रे, सुनो० ॥१३॥

युवराजा के योग्य सभी गुण, राजकुँवर ने पाये रे।
गुण विन गादी पर बैठे वो, गधा कहाये रे, सुनो ॥१४॥

राजकँवर के तन पर डाली, यौवन ने अब छाया रे।
खिले फूल की कलियाँ वैसे, खिलती काया रे, सुनो० ॥१५॥

कावेरी से राजदूत एक, राजसभा में आया रे।
एक महत्त्वपूर्ण संदेशा, नृप का लाया रे, सुनो ॥१६॥

राजकुमारी नाम रूक्मिणी, सुन्दर रूप सुहाया रे।
देखे कँवर अनेक एक भी, दाय न आया रे, सुनो ॥१७॥

नाम आपके सुत का सुनकर, सबने मोद मनाया रे।
जाना पहचाना है रिश्ता, सबको भाया रे, सुनो० ॥१८॥

भेजा मुझे यहाँ पर नरवर मानो अर्ज हमारी रे ।
नृप बोला कल उत्तर देंगे सोच विचारी रे, सुनो० ।।१९।।
मात पिता ने परामर्श कर सुत की सम्मति ले ली रे ।
राजदूत को विदा कर दिया ली गुड भेली रे, सुनो० ।।२०।।
वधाइयाँ बाँटी जाती है सगे सनेही आते रे ।
मित्र परस्पर इसे रिझाते और खिजाते रे, सुनो० ।।२१।।
गज हय पैदल सैन्य सजा कर वडी बारात सजाई रे ।
चले व्याहने को कावेरी शुभ दिन माही रे, सुनो० ।।२२।।
लेकिन राजकँवर के मन मे खुशी नही इतराई रे ।
एक तरह की उदासीनता, भीतर छाई रे, सुनो० ।।२३।।
उत्तर दिशि मे वढते जाते प्रकृति वडी सुहाती रे ।
भिन्न२ फूलो की मीठी खुशबू आती रे, सुनो० ।।२४।।
देख काफिला वनवासी पशु दूर भागते जाते रे ।
उडते हुए पखियो वाले टोले आते रे, सुनो० ।।२५।।
धरती की शोभा है न्यारी शोभा वडी गगन की रे ।
महिमा वडी मगन की महिमा वडी छगन की रे सुनो० ।२६।
योग्य भूमि पर डाला देखो प्रथम पडाव मनोहर रे ।
छावनियाँ छाई अति सुन्दर वन के अदर रे सुनो० ।।२७।।
मित्रो के सग गया घूमने राजकँवर उस वन मे रे ।
प्रकृति का सौन्दर्य सुहाना लगता मन मे रे, सुनो० ।।२८।।

कलकल करती बहती नदियाँ, झर झर झरते झरणे रे ।
खडे पहाड़ किये सिर ऊँचा, बातें करने रे, सुनो० ॥२९॥

कसती व्यंग रंग में हँसती, मित्र मंडली प्यारी रे ।
जानैयों की जून जगत से, मानी न्यारी रे, सुनो० ॥३०॥

कहा मित्र ने अटवी आगे, वो अरिमर्दन वाली रे ।
वो अपना दुश्मन कहलाता, जालिम जाली रे, सुनो०॥३१॥

लौटें सभी किया भोजन फिर, आगे हुए रवाना रे ।
अटवी निकट निशा होते ही, पड़ा रुक जाना रे, सुनो०॥३२॥

पुर सा सुन्दर नगर गया बस, जलने लगी मसालें रे ।
किया प्रबन्ध सुरक्षा का सब, श्रम न निहाले रे, सुनो० ॥३३॥

हुआ सवेरा चले पहर दो, सुख से अटवी लांघी रे ।
निपटे सभी तभी खाने की, चीजें मांगी रे, सुनो० ॥३४॥

दुग्ध पान कर राजकँवर अब, बैठा है सिंहासन रे ।
भावी के सपनों में खोया, करता चिन्तन रे, सुनो० ॥३५॥

इतने में अरि मर्दन नृप का, दूत एक चल आया रे ।
सुना रहा जो समाचार, नृप ने कहलाया रे, सुनो० ॥३६॥

बिना इजाजत सीमा में घुस, तुमने मौत पुकारी रे ।
लौटो वापिस वरना रण की, करो तैयारी रे, सुनो० ॥३७॥

राजकँवर बोला जा कह दे, लडने को तू आजा रे ।
दूत गया झट बजा दिया है, रण का बाजा रे, सुनो० ॥३८॥

राजकँवर की सेना से लड, अरिमर्दन नृप हारा रे ।
वन्दी वना पडा पिंजरे मे, कोई न चारा रे, सुनो० ॥३६॥

आगे जाकर दया दिखाकर, अरि को मुक्त वनाया रे ।
जाओ अपना राज्य करो तुम, सिर न उठाया रे, सुनो ॥४०॥

मुक्त नही मैं मुक्त नही तुम, दोनो ही है वन्दी रे ।
कर्मो से जो मुक्त वही, आत्मा स्वच्छन्दी रे, सुनो० ॥४१॥

नेमिनाथ प्रभु के चरणो मे, सयम लेकर तरना रे ।
नही चाहिये राज्य उसे दो, जिसको करना रे, सुनो०॥४२॥

राजकँवर ने नमन कर दिया, चले गये नृप झट से रे ।
दीक्षा लेकर मुक्त वने जग के, झझट से रे, सुनो० ॥४३॥

जगा द्वेष की जगह स्नेह, मन उभरा चिन्तन प्यारा रे ।
सुहावना लगता है वन का, नेक नजारा रे, सुनो० ॥४४॥

थके पडाव किया सेवक जन, गये ढूढने पानी रे ।
विना अन्न पानी के टिकती, नही जिन्दगानी रे, सुनो ॥४५॥

इधर हो गया भोजन सेवक, पानी ले ना लौटे रे ।
आए तव नृप ने पूछा तुम, सव हो खोटे रे, सुनो० ॥४६॥

इतना समय लगा कैसे तुम, कहाँ गये सच कहना रे ।
सेवक तव जो घटित हुई, वतलाते घटना रे, सुनो०॥४७॥

स्वच्छ सलिल से भरा सरोवर तट पर झूला डाले रे ।
सुन्दर कन्या को देखा मन, सशय पाले रे, सुनो० ॥४८॥

गुन गुनाती कड़ी गीत की झूल रही वो झूला रे ।
मानो उसे देख करके वन मन में फूला रे, सुनो० ।।४९।।

हमें देखकर उसी समय वो बनी नजर से ओझल रे ।
ढूंढी कई देर तक पर हम लौटे निष्फल रे, सुनो० ।।५०।।

अच्छा जावो कहकर सबको विदा कँवर ने कीना रे ।
राजकँवर ने ध्यान उसी पर अपना दीना रे, सुनो० ।।५१।।

सुबह घोषणा करवा दी है हमें न आगे जानारे ।
उन्हीं सेवकों को संग ले वन हुआ रवाना रे, सुनो० ।।५२।।

हरियाली चौ तरफ बिछाई प्रकृति ने उस वन में रे ।
फूल फूल की बातें सुनते हँस जीवन में रे, सुनो० ।।५२।।

वनवासी कन्या वो होगी सुन्दर बडी सुहानी रे ।
यहीं घूमती हुई हमारे नजरों आनी रे, सुनो० ।।५४।।

देख सरोवर बोले सेवक यहीं उसे था देखा रे ।
ये देखो उसके पैरों की दिखती रेखा रे, सुनो० ।।५५।।

इतने में वो खड़ी लता के पास नजर आ जाती रे ।
राजकँवर के मन को सुन्दर आकृति भाती रे, सुनो० ।।५६।।

उसने सोचा इससे सुन्दर नहीं अप्सरा होती रे ।
ब्रह्मराज की है ये पुत्री क्या इकलौती रे, सुनो० ।।५७।।

जाऊँ इसके पास बुलाऊँ पूछूं परिचय सारा रे ।
कहीं ये ना हों जाय यहाँ से नौ दो इग्यारा रे, सुनो० ।।५८।।

सोचा ये भी देख रही है, प्यार भरे नैनो से रे ।
बोलेगी क्यो नही अमृतमय, स्मित वैनो से रे, सुनो०।।५९।।
देख सैनिको मित्रो को वो, दौड गई है वन मे रे ।
किधर गई कुछ खबर रही ना, एक ही क्षण मे रे, सुनो० ।।६०।।
राजकँवर ने कहा सभी से, तुम जावो मैं आता रे ।
रहा खोजता उसे वही पर, चक्कर खाता रे, सुनो० ।।६१।।
वन मे रहा घूमता आगे, जिनवर मन्दिर पाया रे ।
ऋषभ जिनेश्वर के चरणो मे, शीश झुकाया रे, सुनो० ।।६२।।
वनकन्या को भूल गया मन, मे परिवर्तन आया रे ।
चमत्कार श्री जिन दर्शन का, वडा सुहाया रे, सुनो०।।६३।।
प्रभु पूजन के लिये श्रेष्ठतम, फूल शीघ्र ले आया रे ।
वस्त्र शुद्ध थे ही स्तुति करके, लाभ उठाया रे, सुनो०।।६४।।
आनन्दाश्रु लगे टपकने, अग उमग सवाया रे ।
उठ कर देखा तो सन्यासी, नजरे आया रे, सुनो० ।।६५।।
जटा श्वेत वालो की सिर पर, लवी लवी खासी रे ।
गौर वर्ण मुख चन्दा जैसा, नही उदासी रे, सुनो०।।६६।।
किया प्रणाम कँवर ने झुककर, परिचय मुनि ने पूछा रे ।
थोडे मे ही सुना दिया है, हाल समूचा रे, सुनो० ।।६७।।
इतने मे वनकन्या आई, अभी मुनि के पीछे रे ।
राजकँवर को देख रही है, झुकती नीचे रे, सुनो० ।।६८।।

राजकँवर भी बीच बीच में उसे देखता जाता रे ।
उसके मन का प्रेमभाव बह बाहर आता रे सुनो० ॥६९॥

वन कन्या है कौन? कौन है आप मुझे दो उत्तर रे ।
किसने यहाँ बनाया इतना मंदिर सुन्दर रे, सुनो० ॥७०॥

मुनि ने कहा कुमार हमारी लंबी बडी कहानी रे ।
पहले मैं प्रभुपूजन कर लूं बाद सुनानी रे, सुनो० ॥७१॥

ऋषि, ऋषिकन्या दोनों ही उठ चले गये हैं भीतर रे ।
प्रभु पूजन अर्चन कर बोले स्तवन मधुर स्वर रे, सुनो० ।७२।

फिर आ राजकँवर से बोले आश्रम यहीं हमारा रे ।
वही सुनायेंगे हम तुमको जीवन सारा रे, सुनो० ॥७३॥

स्वच्छ पवित्र आश्रम आंगन में पुष्पवाटिका प्यारी रे ।
काष्ट पर्ण मिट्टी से निर्मित कक्ष उदारी रे, सुनो० ॥७४॥

राजकँवर के लिये बिछाया कन्या ने दर्भासन रे ।
काष्टासन पर मुनि बैठे हैं तन मन पावन रे, सुनो० ॥७५॥

पय प्याला, फल ले आई है कन्या भीतर जाकर रे ।
अतिथि का सत्कार कर रहे प्रेम दिखाकर रे, सुनो० ॥७६॥

प्रेमाग्रह को टाल सका ना जो कुछ था स्वीकारा रे ।
राजकंवर को सुना रहे ऋषि जीवन सारा रे, सुनो० ॥७७॥

अमरावती नाम की नगरी नृप हरिषेण सुहाना रे ।
रानी प्रियदर्शन सुत श्री जितसेन बताना रे, सुनो० ॥७८॥

इक दिन राजा हयारूढ हो गए घूमने वन मे रे ।
अश्व वक्र शिक्षित था दौडा अपनी धुन मे रे, सुनो० ॥७९॥

खडा रहा इस वन मे आकर उतर गया नृप नीचे रे ।
सैनिक आए यहाँ ढूँढते पीछे पीछे रे, सुनो० ॥८०॥

विश्वभूति नामक ऋषि कुलपति नरपति उनको नमता रे ।
ऋषि ने आशीर्वाद दिया है मन को गमता रे, सुनो ॥८१॥

कुलपति के प्यारे स्वागत से प्रमुदित होते सारे रे ।
किये हुए का गुण माने वे, सज्जन प्यारे रे, सुनो० ॥८२॥

ऋषि ने ऋषभ जिनेश्वर के गुण बडे प्रेम से गाये रे ।
नृप ने यह मदिर बनवाकर पुण्य कमाये रे, सुनो ॥८३॥

ऋषि ने खुश होकर राजा को विषहर मत्र सिखाया रे
ऋषि की आज्ञा ले नगरी मे राजा आया रे, सुनो० ॥८४॥

इक दिन राजसभा मे कोई नर अनजाना आया रे ।
मगलावती पुरी से आया काम बताया रे, सुनो० ॥८५॥

रानी विद्युत्प्रभा भूप प्रिय दर्शन जन मन प्यारा रे ।
प्रीतिमति है सुता मनोहर रूप उदारा रे, सुनो० ॥८६॥

गई टहलने वहाँ साप ने काटा पडी अचेतन रे ।
आप पधारो जहर उतारो सुनो निवेदन रे, सुनो० ॥८७॥

सुनकर नरवर गया मत्र पढ अहि का जहर उतारा रे ।
राजकुमारी खडी हुई पा जीवन प्यारा रे, सुनो० ॥८८॥

नृप बोले में चलूं सभी ने आग्रह पूर्वक रोका रे ।
दिया न जाता प्रेमिजनों को चलकर धोखा रे, सुनो० ।।८९।।

प्रीतिमति का पाणिग्रहण हरिषेण नृपति से कीना रे ।
दान दहेज हेज घर देकर जगजश लीना रे, सुनो० ।।९०।।

विदा हुए निजपुर को लौटे जनता स्वागत करती रे ।
अगली रानी के मन रानी नहीं अखरती रे, सुनो० ।।९१।।

राजकँवर जितसेन कँवर को राजा ने परणाया रे ।
पुत्रवधू से घर का आँगन शोभा पाया रे, सुनो० ।।९२।।

माता पड़ी बीमार अचानक बहुत इलाज कराया रे ।
बच न सकी उड गई राख बन, काची काया रे, सुनो० ।।९३।।

राजा के मन सदमा पहुंचा मन न महल में लगता रे ।
जन्म मरण की आग लगी जग, सदा सुलगता रे, सुनो० ।।९४।।

आश्रम में जा प्रभु चरणों में अन्तिम जीवन जीऊं रे ।
संयम की वर शुभाराधना अमृत पीऊं रे, सुनो० ।।९५।।

प्रीतिमती ने पति की इच्छा पूर्णतया अब परखी रे ।
बोली नाथ ! साथ मैं आऊं हरखी हरखी रे, सुनो० ।।९६।।

राजमहल में यहीं रहो तुम मानो मेरा कहना रे ।
रानी बोली मुझे आपके संग में रहना रे, सुनो० ।।९७।।

आत्मराधना में संयम में मैं न बनूंगी बाधा रे ।
साथ ले चलो नाथ कहूं क्या, इससे ज्यादा रे, सुनो० ।।९८।।

राजा ने अनुमति दी अपनी राजी हो गई रानी रे।
अनुमति देते आँखो मे से उतरा पानी रे, सुनो० ॥९९॥
राजतिलक कर दिया गया जितसेन कवर के माथे रे।
राजा रानी वन में जाते साथे साथे रे, सुनो०॥१००॥
साश्रुनयन दे रहे विदाई पुरवासी जन सारे रे।
राज भोग सुख छोड आज वन बीच पधारे रे, सुनो०॥१०१॥
मार्ग साधना का न सरल है शूरवीर नर साधे रे।
केवल बात बनाने वाले वे नर आधे रे, सुनो०॥१०२॥
विश्वभूति कुलपति न रहे अब इस दुनिया मे जीवित रे।
देहधारियो की होती है उमर सीमित रे, सुनो० ॥१०३॥
ऋषभदेव की पावन प्रतिमा आलवन अति प्यारा रे।
आत्मसाधको सतो का सह-वास उदारा रे, सुनो०॥१०४॥
विश्वभूति के कृपा पात्र को जान रहे है सारे रे।
सब आदर करते नृप सबको लगते प्यारे रे, सुनो०॥१०५॥
वातावरण वहाँ का राजा रानी के मन भाया रे।
जो सबका होता उसके हित कुछ न पराया रे, सुनो०॥१०६॥
विनय नम्रता भावुकता ने आश्रम का रग बदला रे।
सत्य साधना से होना है जीवन उजला रे, सुनो०॥१०७॥
तप जप आराधन भक्ति मे समय बीतता जाता रे।
पलक झपकते छठा महिना होने आता रे, सुनो०॥१०८॥

प्रीतिमती है गर्भवती जब नृप ने ऐसी जानी रे।
पूछा यह क्या बात बताओ रखो न छानी रे, सुनो०॥१०९॥
पहले जो बतला देती तो आप साथ नहीं लाते रे।
छिपा न रहता गर्भ महिने ऊपर जाते रे, सुनो०॥११०॥
आश्रम वासी तपस्वियों के मन में नफरत भारी रे।
आश्रम में वो ही रहता जो हो ब्रह्मचारी रे, सुनो०॥१११॥
राजा रानी ने आश्रम कीं मर्यादा को लांघा रे।
संतों ने मिलकर आपस में निर्णय मांगारे, सुनो०॥११२॥
एकत्रित हो गये तपस्वी मिलकर निर्णय लेते रे।
आश्रम में रहना न चाहिये हम कह देते रे, सुनो०॥११३॥
कहो कहाँ ले जायेंगे रानी को इस हालत में रे।
करो वकालत आप नहीं इसकी इति अथ में रे, सुनो०॥११४॥
क्यों न सोचता नृप आश्रम में, रहा न जाता ऐसे रे।
कहने को सब कहदें पर हम कहदें कैसे रे, सुनो०॥११५॥
बेहतर होगा आश्रम तज हम अन्य स्थान पर जाये रे।
राजा रानी यहीं रहे इन को न सताये रे, सुनो०॥११६॥
इस पर सभी हो गये सहमत निकले सब संन्यासी रे।
राजा रानी के मन छाई बड़ी उदासी रे, सुनो०॥११७॥
दो ही दो हैं आश्रम में अब रानी मन में रोती रे।
राजा कहता होनहार हो वो ही होती रे, सुनो०॥११८॥

वीत गये नौमास वरावर जन्म सुता ने पाया रे ।
नृप ने इनकी सेवा मे सव समय लगाया रे, सुनो०॥११९॥
गिरता गया स्वास्थ्य रानी का वस परलोक सिधारी रे ।
राजा के सिर आई भारी जिम्मेवारी रे, सुनो०॥१२०॥
दिल पर पत्थर रख राजा ने पुत्री को सभाला रे ।
नाम रखा ऋपिदत्ता उसको पोसा पाला रे, सुनो०॥१२१॥
सस्कारो से सस्कारित अव उसको करते जाते रे ।
रानी की यादो मे आँसू झरते जाते रे सुनो०॥१२२॥
ऋपिदत्ता हो गई वडी अव रूप निखरता जाता रे ।
लिया पिता की सेवा का व्रत वडा सुहाता रे, सुनो०॥१२३॥
हिरन हिरनिया पास घूमते स्नेह वडा वरसाती रे ।
वनवासी पशु उसकी दुनिया दूर न जाती रे, सुनो०॥१२४॥
इतनी रूपवती है कन्या ऋपि ने इसे निहारा रे ।
वनवासी न उडा ले जाये वल के द्वारा रे, सुनो०॥१२५॥
विपापहारी मत्र मिला जव अजन विधि भी पाई रे ।
विश्वभूति की याद आ गई लू अजमाई रे, सुनो०॥१२६॥
जिसकी आखो मे अजन हो उसे न कोई देखे रे ।
वो सारी दुनिया को देखे अपने लेखे रे, सुनो०॥१२७॥
पूरी तरह याद करके विधि अजन तुरत वनाया रे ।
सिखला दिया प्रयोग सुता को स्नेह सवाया रे, सुनो०॥१२८॥

वनवासी कोई भी उसको नहीं देखने पाता रे ।
घूमे जहां करे जो इसका जब जी आता रे, सुनो०॥१२९॥
सदा पिता की सेवा करती यौवन पथ में आई रे ।
ऋषि ने अपनी आत्मकथा दी साफ सुनाई रे, सुनो०॥१३०॥
वो ऋषि मैं ऋषि कन्या है यह आगे बोल न पाये रे ।
खड़े रहे दीवार सहारे देह टिकाये रे, सुनो०॥१३१॥
राज कॅवर ने ऋषिदत्ता की ओर निगाहें डाली रे ।
ऋषि नैनों से पिला रही है अमृत प्याली रे, सुनो०॥१३२॥
प्रणयाधीनों के नैनों को राजर्षि ने झांका रे ।
प्रेम भावना समय सभी को जावे आंका रे, सुनो०॥१३३॥
ऋषि बोले इन्कार न करना एक भेंट में देऊं रे ।
आज्ञा दो स्वीकार करूं मै खुश-खुश लेऊं रे, सुनो०॥१३४॥
ऋषि को तुम्हें सौंपता हूं मैं भेंट यही स्वीकारो रे ।
मेरे सिर का भार प्यार के साथ उतारो रे, सुनो०॥१३५॥
कोमल बड़ी-बड़ी नाजुक है मैंने इसको पाला रे ।
रखना इसे संभाल मान घर का उजियाला रे, सुनो०॥१३६॥
आज्ञा शिरोधार्य कर पद में उसने शीष नवाया रे ।
ऋषि ने सिर चूमा सहलाया स्नेह दिखाया रे, सुनो०॥१३७॥
ऋषि से राजकंवर कहता यों चलिये भोजन करिये रे ।
आमंत्रण स्वीकार कीजिये जरा न डरिये रे, सुनो०॥१३८॥

ऋषियो की आश्रम की अपनी अलग एक मर्यादा रे।
तुमने कहा उसे खाने से माना ज्यादा रे, सुनो०॥१३९॥

वैठी ऋषि गड रही जमी मे मन से वाते करती रे।
रोये रोयें वोल रहे मुख खुशिया तरती रे, सुनो०॥१४०॥

कनक छावनी मे चल आया सव वृत्तात सुनाया रे।
वैठ सखाओ के सग मे अव खाना खाया रे, सुनो०॥१४१॥

शादी के निर्णय का स्वागत किया सभी ने मिलकर रे।
सव वोले मूरख जन चूके आया अवसर रे, सुनो०॥१४२॥

पाच दिनो के वाद श्रेष्ठ दिन राजगुरु वतलाता रे।
सूचित करवा दिया सैन्य को कुछ ना जाता रे, सुनो०॥१४३॥

आश्रम मे आते जाते सव जिनवर दर्शन करते रे।
मुनि से धर्म श्रवण कर मन मे खुशिया भरते रे, सुनो०॥१४४॥

शादी का दिन आया आश्रम ऋषि को गया सजाया रे।
राजकवर ने ऋषि कन्या से फेरा खाया रे, सुनो०॥१४५॥

ढ़ाल दूसरी

दोहा

गये निवास स्थान पर, राजर्षि के साथ ।
बैठे दंपति सामने, जोड विनय से हाथ ।।

तर्ज—भीनासर स्वामी०

सुनिये नरनारी ऋषिदत्तारी, बात कहुं सुखकार ।
नहीं छुटे प्राणी हो चाहे राणी बांध्या कर्म लगार ।।टेर।।

रुकिये कुछ दिन तक जहाँ जी, मानें मेरी बात ।
जाना तो है ही तुम्हें जी, ले इस ऋषि को साथ रे, सु०।।१४७।।

प्रसन्नता के साथ मैं जी, यहीं रहूंगा नाथ ।
ठाली जायेगी नहीं जी, पूज्यपाद की बात रे, सुनिये।।१४८।।

वातावरण पसंद है जी, सुन्दर जिन प्रासाद ।
मन को मिलता है सुखद जी, आश्रम से आल्हाद रे,सु०।।१४९।।

सुन कर ऋषि गद्-गद् हुए जी, लगे बरसने नैन ।
चैन परम हो चित्त में जी, तब क्यों बोले बैन रे, सु०।।१५०।।

मित्रों से उसनें कहा जी, जा सकते हैं आप ।
रुकना है मुझको यहां जी, बोल दिया यों साफ रे, सु०।।१५१।।

कावेरी जाना न क्यों जी, पूछ रहे हैं मित्र ।
ब्याहोगे ना रुक्मिणी जी, लौटाओगे चित्र रे, सुनिये०।।१५२।।

जाना कावेरी नही जी, करना नही विवाह ।
क्या होगा इस वात की जी, मुझे नही परवाह रे, सु०।।१५३।।

पूज्य पिताजी क्या नही जी, होगे मन नाराज ।
मैं समझाऊँगा उन्हे जी, मेरे मन का राज रे, सुनिये०।।१५४।।

यह ऋषि जीवन सगिनी जी, नही अन्य से काम ।
कितना रुकना है यहा जी, जाने प्रभु श्री राम रे, सु०।।१५५।।

मित्र उचित रहना यहा जी, रह तू सुख के साथ ।
हम अपने घर को चले जी, सुनो स्पष्ट सब वात रे, सु०।।१५६।।

कर प्रणाम ऋषि चरण मे जो, लौटे सारे लोग ।
सैन्य व्यवस्थित कर लिया जी,कुछ नहिं नया प्रयोग रे।।१५७।।

आश्रम मे ही कर लिया जी, इन दोनो ने वास ।
जिससे ऋषि अव रह सकेजी,पूज्य पिता के पास रे,सु०।।१५८।।

पूज्य पिता के साथ मे जी, पति की सेवा नित्य ।
ऋषि कन्या के हो गये जी, दोनो दैनिक कृत्य रे, सु०।।१५९।।
मूर्ति प्रेम सौजन्य की जी, सीमित करती वात ।
साय प्रात घूमने जी, जाती पति के साथ रे, सु०।।१६०।।
स्वामिन माँ है आपके जी, प्रश्न किया धर प्यार ।
हा, है मेरो मा भली जी,ममता का भडार रे, सुनिये०।।१६१।।
माँ को देखा ही न था जी, मिला न माँ का प्यार ।
वचपन मे वो मर चुकी जी, ऋषि क्या जाने सार,सु०।।१६२।।

संतों मुनियों के प्रति जी, माँ का श्रद्धाभाव।
सच्ची श्रमणोपासिका जी,आकृति भद्र स्वभाव रे, सु०।।१६३।।
मेरे से करती बहुत जी, मेरी माता प्यार।
तुझे लगेगी बहुत ही जी, प्यारी और उदार रे, सु०।।१६४।।
आज्ञा हो तो पूछ लूं जी, एक बात मैं और।
पूछो मत झिझको ऋषि जी,दिया कनक ने जोर रे,सु०।।१६५।।
मुझे छोड़ किससे कहो जी, पूछोगी तुम बात।
हम तुम दोनों एक हैं जी, जीयेंगे नित साथ रे, सु०।।१६६।।
कहिये क्या परिवार में जी, चलता मांसाहार।
यही पूछने के लिये जी, इतना किया विचार रे, सु०।।१६७।।
ऋषि न हमारे घर कभी जी, होता मांसाहार।
धर्म अहिंसा मानते जी, करते शाकाहार रे, सुनिये०।।१६८।।
ऋषभ देव भगवान के जी, परम पुजारी भक्त।
दया प्रेम वात्सल्य से जी, रोम-२ अभिषिक्त रे, सु०।।१६९।।
ऋषि का मुखड़ा खिल उठा जी, जैसे खिले गुलाब।
कितने अच्छे आप हो जी, जिसका नहीं जवाब रे, सु०।।१७०।।
हथेलियों के बीच में जी, शीघ्र हथेली दाब।
मौन लिया मनसे नहीं जी, मिलता नेक जबाब रे, सु०।।१७१।।
ऋषि आयेगा क्या तुम्हें जी, रहना वहां पसंद।
महलों का वातावरण जी,एक तरह से बंद रे, सुनिये०।।१७२।।

जहा रहोगे तुम वहा जी, रहना मुझे पसन्द ।
दूर न करना बस मुझे जी, इसमे सब आनन्द रे, सु०॥१७३॥

महल अगर भाया न मन जी, तो आश्रम-सा स्थान ।
वही सजा लेंगे अपन जी, ऐसा ही लो मान रे, सुनिये०॥१७४॥

प्रिय मेरे मन की कही जी, मानोगे इक बात ।
मृग-मृगी का जोडला जी, ले लोगे क्या साथ रे, सु०॥१७५॥

मृगछौने भोले भले जी, इनसे मुझको प्यार ।
इन्हें साथ लेना मुझे जी, प्रेम सहित स्वीकार रे, सु०॥१७६॥

ले न सके जो साथ तो जी, ये न जीयेंगे नाथ ।
बहुत-बहुत आत्मीयता जी, इनकी मेरे साथ रे, सु०॥१७७॥

ऋषि तेरी हर बात ही जी, देती अति आनन्द ।
ऐसे कहकर कर दिया जी, ऋषि का आनन बन्द रे, सु०॥१७८॥

लगा अन्धेरा उतरने जी, आये आश्रम चाल ।
लगी सजाने ऋषि स्वय जी, तुरत आरती थाल रे, सु०॥१७९॥

थमा दिया दीपक जला जी, राजर्षि के हाथ ।
शख बजा घटी बजी जी, की स्तवना सब साथ रे, सु०॥१८०॥

ढाल तीसरी

दोहा

ऋषभ जिनेश्वर की लगी प्रतिमा रम्य विशेष ।
कभी-२ रुचता अधिक ज्यों धार्मिक उपदेश ।।१८१।।

तर्ज—माँ सूं मूंढे बोल

हुआ विवाह महीना बीता याद नहीं घर आता रे ।
वातावरण सुहाना वन का मन को भाता रे, सुनो०।।१८२।।

भोले भाले मृगछौने ये करते इत उत क्रीड़ा रे ।
उडते रंग बिरंगे पंछी हरते पीड़ा रे, सुनो०।।१८३।।

कल कल करते बहते झरने कहते जग है अस्थिर रे ।
दोष मुक्त मन तुल्य गगन नित, जग के ऊपर रे, सुनो०।।१८४।।

फूलों की सौरभ से सुरभित वन का कोना कोना रे ।
गंध रहित हो क्षम्य नहीं दुर्गन्धित होना रे, सुनो०।।१८५।।

छोटे बडे सभी पशुओं का वन है अपने घर सम रे ।
एकाधिकार किसी का होना कहीं न उत्तम रे, सुनो०।।१८६।।

मन में सुख होने से वन में सुख मिलने की आशा रे ।
क्या खेले नर पड़े नहीं जो सुलटा पाशा रे, सुनो०।।१८७।।

कनक चटाई पर लेटा था तरू अशोक के नीचे रे ।
मृग मृगी के साथ खड़ी थी ऋषि के पीछे रे, सुनो०।।१८८।।

राजर्षि चल आये बैठे कँवर पास मे आकर रे ।
ऋषि भी आकर बैठ गई है शीश झुकाकर रे, सुनो०॥१८९॥
कुछ कहने को ही आये हैं सोचा राजकँवर ने रे ।
कुछ कहना प्रारभ किया है श्री मुनिवर ने रे, सुनो०॥१९०॥
तुम सुविनीत कुमार कर रहे मेरी इच्छा पूरी रे ।
करु प्रशंसा तन से मन से भूरि भूरि रे, सुनो०॥१९१॥
राजमहल को छोड यहाँ पर रहते हो आश्रम मे रे ।
आप नही आते सुख सुविधाओ के भ्रम मे रे, सुनो०॥१९२॥
ऋषिदत्ता है पुण्यशालिनी इसने तुमको पाया रे ।
कर स्वीकार आपने मुझ पर भार चढाया रे, सुनो०॥१९३॥
मुक्त किया चिन्ता से मुझको कहकर रोये रिषिवर रे ।
राजकँवर ने आँसू पोंछे लेकर चीवर रे, सुनो०॥१९४॥
ऋषिदत्ता के लिये आपसे है दो वाते कहनी रे ।
जो भी इसकी भूले होवे सारी सहनी रे, सुनो०॥१९५॥
राजमहल की पुत्रवधू सी कला न इसको आती रे ।
सह पाये अपमान न ऐसी इसकी छाती रे, सुनो०॥१९६॥
गृह कार्यो मे कुशल नही है है ये भोली भाली रे ।
इसके लिये आप ही हो बस सदा दिवाली रे, सुनो०॥१९७॥
सम्हालना इसके मन को मत पीडाये पहुचाना रे ।
तुम्हे देवता मानेगी ये इतना जाना रे, सुनो०॥१९८॥

पाकर के सहवास आपका होशियार हो जायेगी ।
आज्ञा शीष चढायेगी व्रत लिया निभायेगी, सुनो०।।१९९।।

अगर भूल हो जाये तो तुम इसे क्षमा कर देना जी ।
मेरी अन्तर इच्छा पर बस हां भर लेना जी, सुनो०।।२००।।

राजकँवर ने कहा आप क्यों फरमाते हो ऐसा रे ।
हैं हम यहीं पास में फिर ये चिन्तन कैसा रे, सुनो० ।।२०१।।

नहीं कुवँर अब घर को जाना उचित रहेगा मानो रे ।
मैं भी मेरा रास्ता लूंगा हठ मत ठानो रे, सुनो०।।२०२।।

आप कहाँ जायेंगे ऐसे राजकँवर ने पूछा रे ।
चलो हमारे साथ वहेंगे भार समूचा रे, सुनो०।।२०३।।

वन में नई कुटीर नया जिनमंदिर बनवा देंगे रे ।
नई-२ धार्मिक शिक्षा ले मन बदलेंगे रे, सुनो०।।२०४।।

किसके लिये मुझे जीना है इसके खातिर जीया रे ।
मतलब रहा नहीं जीने से धापा हीया रे, सुनो०।।२०५।।
अग्निप्रवेश मुझे करना है सुनकर दोनों चीखे रे ।
नहीं-२ ऐसा मत करना बोले तीखे रे, सुनो०।।२०६।।
कहा सुता ने पूज्य पिता से ऐसा कभी न करना रे ।
वर्जित माना आत्म घात के द्वारा मरना रे, सुनो०।।२०७।।
बेटी मेरी बात सुनो तुम शील पालना मनसे रे ।
सेवा मान बड़ों का करना तनमन धन से रे, सुनो०।।२०८।।

आतमघात से मुझे नही असमाधि होने वाली रे।
मेरा भेद ज्ञान अतिदृढ है वात न खाली रे, सुनो०॥२०९॥

देह हुई अव जर्जर इसमे कुछ भी सार नही है रे।
मरने से डर जीने से मन प्यार नही है रे, सुनो०॥२१०॥

राजर्षि से लिपट गई ऋषिदत्ता रोती रोती रे।
नाजुक दिलवालो की हालत ऐसी होती रे, सुनो०॥२११॥

इधर घास वाली कुटिया मे, आग लगी जोरो से रे।
ऋषि के द्वारा लगी लगी ना वह औरो से रे, सुनो०॥२१२॥

कहा ऋषि ने राजकवर से तुम ऋषि को सभालो रे।
कोई दुस्साहस कर ना वैठे इसको पालो रे, सुनो०॥२१३॥

उसे इसे सम्हला राजर्षि खडे हुए कर जोडे रे।
परमेश्वर को वदन करके जल्दी दौडे रे, सुनो०॥२१४॥
उसी आग मे कूद पडे वो इस काया को त्यागा रे।
ऋषिदत्ता को छोड कवर आश्रम मे भागा रे, सुनो०॥२१५॥
शीतल पानी ला दे छींटे इसे होश मे लाया रे।
उत्तरीय से हवा डालकर स्वस्थ वनाया रे, सुनो०॥२१६॥
दिया कँवर ने नही भागने पकडे रखा वरावर रे।
गोदी मे ले सिर सहलाता खुद ही रोकर रे, सुनो०॥२१७॥
मै हो गई अनाथ मात का मुह मैने न निहारा रे।
थे सर्वस्व आप ही ऋषि ने जोर पुकारा रे, सुनो०॥२१८॥

ऋषि को उठा कनक कंधे पर आश्रम में ले आया रे।
बाल ठीक कर मुंह धो पानी पिला सुलाया रे, सुनो०॥२१६॥
पास बैठ दे रहा सान्त्वना देह लता सहलाता रे।
कोमल हृदया नारी से दुख सहा न जाता रे, सुनो०॥२२०॥
देख दूर से आग लगी कुछ सैनिक दौड़े आये रे।
राजकंवर के मुख से वर्णन सुन चकराये रे, सुनो०॥२२१॥
राजकंवर ऋषि से कहता है देवी शोक निवारो रे।
किया आत्म कल्याण पिताने जरा विचारो रे, सुनो०॥२२२॥
पूर्वावस्था में राजा फिर बने पिता व्रत धारी रे।
उत्तर क्रिया हमें ही उनकी करनी सारी रे, सुनो०॥२२३॥
सेनापति से कहा स्तूप निर्माण यहां पर करना रे।
ऋषभदेव जिनवर का लेना भव-२ शरणा रे, सुनो०॥२२४॥
दोनों जिनमंदिर में जाकर जिनवर के गुण गाते रे।
वीतराग बनने की इच्छा सतत जगाते रे, सुनो०॥२२५॥
प्रभु भक्ति कर बाहर आये मृग मृगी थे हाजिर रे।
ऋषि के साथ खेलते हैं वे उछल उछल कर रे, सुनो०॥२२६॥
फिर घर आकर दोनों ने कर लिया प्रेम से भोजन रे।
अब इस वन में रहने का कुछ, है न प्रयोजन रे, सु०॥२२७॥
बिना पिताजी के सब सूना सूना लगता आश्रम रे।
चले अपन अपने घर को करने को उपक्रम रे, सुनो०॥२२८॥

सेनापति को बुला दिया आदेश नगर चलने का रे ।
सेवक लेता नाम नही इत उत टलने का रे, सुनो०।।२२६।।

दोहा

वन पीहर को छोडकर, ऋपि जाती ससुराल ।
कन्याओ को ही पता जो भी होता हाल ।।

तर्ज—मूल

रथ मे चढते ही ऋपि सिसकी, डुसक डुसक कर रोई रे ।
गिर जाती जो नही थामता पति मनमोही रे, सुनो०।।२३०।।
हिरण और हिरणी का जोडा साथ ले लिया रथ मे रे ।
पोंछ रहा पति आमू प्यारे वन के पथ मे रे, सुनो०।।२३१।।
थकते जहा पडाव डालते जब भी हो जाता मन रे ।
राजकवर को घर के जैसा लगता था वन रे, सुनो०।।२३२।।
ऋपि अपने रास्ते मे करती जाती वृक्षारोपण रे ।
वृक्षा रोपण द्वारा मिलता नया प्रपोपण रे, सुनो०।।२३३।।
पति ने कहा वहा महलो मे कर न सकेगी ऐसा रे ।
ऋपि वोली वन मे तो कर लू लगे न पैसा रे, सुनो०।।२३४।।
ऋपि के निर्दोपी नैनो मे, वहुत वडा आकर्पण रे ।
इधर उधर दर्शन से होता प्रेम सवर्पण रे, सुनो०।।२३५।।

ज्यों-२ शहर निकट आता था त्यों-२ मन का मंथन रे ।
चिन्तन की आदि होती है होता अंत न रे, सुनो०।।२३६।।

मां नाराज नहीं होगी होंगे न पिताजी क्रोधित रे ।
की न रुकमणी से शादी घर, से अनुमोदित रे, सुनो०।।२३७।।

आज्ञांकितता अपनी अपने को आंदोलित करती रे ।
उलाहना खाया न आज तक बात अखरती रे, सुनो०।।२३८।।

नहीं चाहिये पुत्रवधू ऋषि कन्या यह वनवासी रे,
कह देगी मां तो क्या होगा, चिन्ता खासी रे, सुनो०।।२३९।।

मैं क्या उत्तर दूँगा कैसे कसे व्यंग सह लूंगा रे ।
जिसको लाया उससे कैसे स्नेह रखूगा रे, सुनो०।।२४०।।

उन्हें मना लूंगा में उनके पांवों में सिर रखकर रे ।
मां मेरा रक्षण कर लेगी प्रेम नजर धर रे, सुनो०।।२४१।।

सिखला देगी राजमहल की जीवन पद्धति प्यारी रे ।
माफ करेगी मनसे इसकी भूलें सारी रे, सुनो०।।२४२।।

हुआ हुआ सो किया-२ सो जो होगा देखूंगा रे ।
अभी सोचने से क्या मतलब, घर पहुँचुंगा रे, सुनो०।।२४३।।

ऋषि से कहा सामने दिखता, वो अपना पुर आया रे ।
रथ की गति में वेग आ गया मन हरषाया रे, सुनो०।।२४४।।

पुर वन में सचिवादिक सारे स्वागत करने हाजिर रे ।
जय-२ बोलाते सब मिलकर मीठे मनभर रे, सुनो०।।२४५।।

ऋषिदत्ता को देख-२ मन हुए प्रसन्न सकल जन रे ।
कुशल क्षेम सबने मिल पूछा बोले धन धनरे सुनो०।।२४६।।
नगर प्रवेश हुआ दोनो का भीड लगी अति भारी रे ।
राज महल मे पहुच गई है अब असवारी रे, सुनो०।।२४७।।
पहले मा के पास पहुच कर अपना शीश झुकाया रे ।
सिर पर हाथ फिराते मा ने स्नेह दिखाया रे, सुनो०।।२४८।।
ले क्या नाम बुलाऊ बेटी ! 'ऋषि' ऋषि धीरे बोली रे ।
झुकी शरम से आखे नीची मन की भोली रे, सुनो०।।२४६।।
बेटा बोला पितृ चरण मे नमस्कार कर आऊ रे ।
मा बोली ऋषि को भी ले जा, सही सुझाऊ रे, सुनो०।।२५०।।
गये पिता के पास नमे वो झिझक रही ना मन मे रे ।
आशीर्वाद मिला हितकारी नव जीवन मे रे, सुनो०।।२५१।।
बेटी राजमहल तेरा ही घर है सुख मे रहना रे ।
लिये काम के दास दासियो से ही कहना रे, सुनो०।।२५२।।
किया इशारा राजकवर ने गई ऋषि उठ सत्वर रे ।
राजकवर से फरमाते हैं, ऐसे नखर रे, सुनो०।।२५३।।
ऋषि वनकन्या नही राज-कन्या है भोली भाली रे ।
वनवासी हरिषेण नृपति ने इसको पाली रे, सुनो०।।२५४।।
राजा रानी से मैं परिचित सगपन नही अनजाना रे ।
था अपना सबध पुत्र सुन बहुत पुराना रे, सुनो०।।२५५।।

सुन्दर गुणी सुशीला सीधी मुख आकृति बतलाती रे ।
प्रसन्नता से राजकँवर की फूली छाती रे, सुनो०।।२५६।।

कावेरी क्यों गया न ? हमसे क्यों नहीं पूछाताछा रे ।
उलाहना भी दिया नहीं है झूठा साचा रे, सुनो०।।२५७।।

सुत से कहा पिता ने बेटे रोष न इस पर करना रे ।
रीत सीखते देर लगेगी दोष न धरना रे, सुनो०।।२५८।।

नृप ऐसा व्यवहार करेंगे सुत ने नहीं विचारा रे ।
श्रद्धा बढ़ी पिताजी के प्रति इसके द्वारा रे, सुनो०।।२५९।।

आज्ञा ले मां पास आ गया ऋषि ने किया इशारा रे ।
यहां मंगादूं क्या पति बोला हां हां प्यारा रे, सुनो०।।२६०।।

मां सुन बोली क्या है-सुतने, कहा जोड़ला लाये रे ।
बहुत पसंद तुम्हें आयेगा सही बताये रे, सुनो०।।२६१।।

दासी गई हिरण हिरणी के जोड़े को ले आई रे ।
इतना सुन्दर कह कर मां ने खुशी दिखाई रे, सुनो०।।२६२।।

महलों के पीछे उपवन में इसे रखा जावेगा रे ।
पशु में भी आत्मा होती है सुख पावेगा रे, सुनो०।।२६३।।

बोली सास घास देने को मैं ऋषि मिल जायेगी रे ।
पहले इसे खिलायेंगी फिर हम खायेंगी रे, सुनो०।।२६४।।

इसे खिलाये बिना न खाना मेरी बहू को भाता रे ।
जुड़ जाता आत्मा से आत्मा का यह नाता रे, सुनो०।।२६५।।

ऐसी जगह रखो वन मे महलो से दिखे हमेशा रे।
पशुपालन भी एक कला है, और है पेशा रे, सुनो०॥२६६॥

राजकँवर ने खाना खाया सास बहू ने खाया रे।
करने को आराम कँवर महलो मे आया रे, सुनो०॥२६७॥

सुखशय्या मे सोया आई नीद थकान मिटाती रे।
बैठगई ऋषि यही पास मे, नीद न आती रे, सुनो०॥२६८॥

दिन का बीता पहर तीसरा आख तुरत खुल जाती रे।
सविनय उठी ऋषि झारी से, सलिल पिलाती रे, सु०॥२६९॥

तू कब आयी कबसे बैठी, अभी-२ मै आई रे।
मा ने महल बताया सारा साथ घुमाई रे, सुनो०॥२७०॥

इन्तजार करती होगी मा वहा अपन को चलना रे।
मा की आज्ञा पालन मे हम, करे न स्खलना रे, सु०॥२७१॥

मा के पास गये दोनो कुछ, स्त्रिया वहा थी आई रे।
भद्रासन पर बैठ गये थे शीश नवाई रे, सुनो०॥२७२॥

मिलने आई हुई स्त्रियो ने करी प्रशसा भारी रे।
रूप प्रशसा सुन ऋषि शरमा गई बेचारी रे, सुनो०॥२७३॥

मा ने उसे खीचकर अपने पास तुरत बिठलाया रे।
अभिवादन कर गई स्त्रिया दिन ढलने आया रे, सु०॥२७४॥

प्रसन्नता की आभा बिखरी माँ के मुख पर भारी रे।
पूर्व जन्म की सबधित ऋषि लगती प्यारी रे, सुनो०॥२७५॥

अथ से इति तक बातें सुनने की इच्छा माता की रे।
जिसे व्याहने गया रही वह कैसे बाकी रे सुनो०॥२७६॥

दासी से कह दिया किसी को अब मत आने देना रे।
घर की बातों में औरों का क्या है लेना रे सुनो०॥२७७॥

नेत्र बरसने लगे सुनी जब मां ने घटना सारी रे।
बैठी ऋषि रो पड़ी फफककर, नारी-नारीरे, सुनो०॥२७८॥

सुत ने मां से कहा सुनो मां, बहू न रात को खाती रे।
मां बोली अच्छा है बेटा धर्म निभाती रे, सुनो०॥२७९॥

तेरे अपने आप त्याग हो जायेगा सच मानो रे।
तुझे खिलाकर खायेगी यह निश्चय जानो रे, सुनो०॥२८०॥

ऋषि को ले मां गई रसोई घर में जल्दी उठकर रे।
घर अपने मालिक के उपर होता निर्भर रे, सुनो०॥२८१॥
दासी ने आ कहा आपके खडे मित्र कुछ बाहर रे।
आया कँवर मिला बातें की हाथ मिलाकर रे, सुनो०॥२८२॥
मिला निमंत्रण भोजन का इत फिर चल भीतर आया रे।
पिता पुत्र ने साथ बैठकर खाना खाया रे सुनो०॥२८३॥
माँ के साथ रसोई घर में, सहायता ऋषि करती रे।
पति की प्रसन्नता का पथ प्रतिपल अनुसरती रे, सुनो०॥२८४॥
रीतभांत से परिचित होते लगी न ज्यादा देरी रे।
चलने से परिचित हो जाती सारी सेरी रे सुनो०॥२८५॥

सास स्वय को सास नही गिन गिनती माता सरखी रे।
अहकारिता पनप न पाई निश्चित परखी रे, सुनो०॥२८६॥
हसती रमती देख ऋषि को महल झूमता सारा रे।
लगता कनक महल भी लगता ऋषि को प्यारा रे,सु०॥२८७॥
क्या आश्रम की याद न आती सुनकर रोना आया रे।
प्रश्न पूछकर राजकवर ने धोखा खाया रे, सुनो०॥२८८॥
अर्थ पूछने का है मेरा कमी न कोई खलती रे।
ऋषि खुल करके वतला दे तू कोई गलती रे सुनो०॥२८९॥
किसी वात की कमी न मेरा ध्यान सभी ये रखते रे।
हिरण और हिरणी भी देखो यहा फुदकते रे, सुनो०॥२९०॥
दूर-२ रमणीय वनो मे कवर इसे ले जाता रे।
नदियो के तट वहते झरने इसे दिखाता रे, सुनो०॥२९१॥
पाव डुवोते रखती जल मे सुख से वैठ किनारे रे।
फसलो मे हो खडी कवर को हेला मारे रे, सुनो०॥२९२॥
खोजो मुझे आप आकरके छुपकर पति से कहती रे।
पहाडियो पर चढने मे पीछे ना रहती रे, सुनो०॥२९३॥
सुनकर कुहू कुहू कोयल की गीत प्रेम से गाती रे।
हँसती और नाचती अपने आप सुहानी रे, सुनो०॥२९४॥
खिले हुए फूलो सी सौरभ तन से छोडा करती रे।
देखा नही किसी ने आलस मोडा करती रे, सुनो०॥२९५॥

पाँवों की गति गति शब्दों की देती नहीं सुनाई रे।
शरम नैन में धरम चित्त में लिया बसाई रे, सुनो०।।२९६।।
नित उठ न्हा धो प्रभु मंदिर में जाती पूजा करती रे।
तन मन पुलकित हो उठता जब स्तवन उच्चरती रे,सुनो०२९७
भावों में बह जाती जब वो गीत भक्ति के गाती रे।
मधुर मधुर आवाज कर्णप्रिय बहुत सुहाती रे, सुनो०।।२९८।।
खाती नहीं रात को खाना कटु न बोलती वानी रे।
रखती नहीं नहीं पीती अनछाना पानी रे, सुनो०।।२९९।।
नहीं उघाड़ी रखती चीजें जीवदया व्रत पाले रे।
श्रावक जीवन की मर्यादा सदा संभाले रे, सुनो०।।३००।।
दिन पख माह वर्ष सुख वाले आँख फुरकते जाते रे।
कल की सी है बात सभी मिल ऐसा गाते रे, सुनो०।।३०१।।
सुख के पीछे पीछे आता दुःख न नजर में आता रे।
चुपके से आ बड़े जोर से नाड़ दबाता रे, सुनो०।।३०२।।

ढ़ाल पाँचवीं

दोहा

सुख के पीछे दुख है, सदा न रहता क्षेम।
क्या होता ऋषि संग अब, हाल सुनो धर प्रेम ।।

तर्ज—माँ सू मूढ़े बोल

इक दिन सुबह न बनने वाली, बात बनी अनहोनी रे।
बिन अपराधे अपराधी भई ऋषि सलोनी रे, सुनो०।।३०३।।
राज महल के दरवाजे पर जनता शोर मचाती रे।
हत्या हुई पुरुष की पुर मे कपकपाती रे, सुनो०।।३०४।।
राजकँवर ने उठकर ऋषि के मुख की ओर निहारा रे।
बिखरे पडे मास टुकडो का बुरा नजारा रे, सुनो०।।३०५।।
फैल रही दुर्गंध मुह पर दाग रक्त के दिखते रे।
पैर जमी से लगे उखडने कही न टिकते रे, सुनो०।।३०६।।
सोचा ऋषि ने रजनी मे जा, यह हत्या की होगी रे।
छुपकर इसमे रहता कोई राक्षस रोगी रे, सुनो०।।३०७।।
आश्रमवासी ऋषिदत्ता ऋषि सुता कहाने वाली रे।
उपर से उजली भीतर से इतनो काली रे, सुनो०।।३०८।।
त्रिया चरित्र बडा दुर्गम है नीति शास्त्र सच कहता रे।
मेरे जैसा नर नित स्त्री के वश मे रहता रे, सुनो०।।३०९।।
फिर मन बोला ऐसी हो नही सकती ये ऋषि बाला रे।
इससे पहले रूप न ऐसा देखा आला रे, सुनो०।।३१०।।

फिर मन बोला मांस खंड ये यहां कहां से आये रे।
लगे खून के धब्बे कहते इसने खाये रे, सुनो०॥३११।
फिर मन बोला इससे पुछू देखू क्या दे उत्तर रे।
ऋषि को जगा सुना कर घटना पूछी डटकर रे,सुनो०॥३१२।
नाथ! विषाद घृणा मुख पर क्यों देती मुझे दिखाई रे।
तेरा ही मुख देख कंवर बोला झल्लाई रे, सुनो०॥३१३।
पुर में हत्या हुई पुरुष की शोर मचा है भारी रे।
तूं कोई डायन राक्षसणी है या नारी रे, सुनो०॥३१४।
ऋषि बोली इस घटना से संबंध नहीं कुछ मेरा रे।
मेरी आंखों के आगे छाया अंधेरा रे सुनो०॥३१५।
मेरे अहितैषी नर ने यह कृत्य किया है सारा रे।
पर न प्रमाण मिलेगा कोई मेरे द्वारा रे, सुनो०॥३१६।
निर्भय और नचिंत नेत्र से लगती पूर्ण सचाई रे।
फॅसी जाल में चिड़िया जाये क्यों न बचाई रे, सुनो०॥३१७॥
कहा कॅवर ने मैंने मन में गलत धारणा धारी रे।
माफ मुझे करदे ऋषिदत्ता निर्मल नारी रे, सुनो०॥३१८॥
पति ने स्वयं सलिल लेकर के, ऋषि का मुॅह धो डाला रे।
मांस खंड नाली में डाले काम संभाला रे, सुनो०॥३१९॥
कुछ भी नहीं बना हो ऐसे दोनों बाहर आये रे।
बहू सास को पुत्र पिता को शीष नवाये रे, सुनो०॥३२०॥

राजा के मुख पर स्वाभाविक दिखी रोप की रेखा रे ।
ऐसा पापी हत्यारा नर कही न देखा रे, सुनो०।।३२१।।

माँ से ऋषि जो कहे कहेगी-राजाजी से माता रे ।
नृप घटना से जोडेगे इस ऋषि का नाता रे सुनो०।।३२२।।

ऋषि ने नही किसी का कुछ भी अव तक काम विगाडा रे ।
कौन शत्रु है जिसको जाए आज लताडा रे, सुनो०।।३२३।।

पति ने पत्नी से पूछा दुख आज तुझे पहुचाया रे ।
पत्नी वोली मेरा कृत अघ सम्मुख आया रे, सुनो०।।३२४।।

पाप उदय मे अगर न आये तो न वने कृत ऐसा रे ।
सह लूंगी दुख जव भी आये चाहे जैसा रे, सुनो०।।३२५।।

मेरे लिये आपको मेरा त्याग पडे जो करना रे ।
कर देना, दुख सह लेना, दुख से मत डरना रे, सुनो०।।३२६।।

रख दीना कर मुह पर ऋषि के राजकवर ने अपना रे ।
वोला झूठ मान जो आवे ऐसा सपना रे, सुनो०।।३२७।।

सुख मे साथ रहू दु ख मे दू त्याग वने नही ऐसा रे ।
रीति नीति विपरीत ये वर्तन राक्षस जैसा रे, सुनो०।।३२८।।

पहरा चौकी व्यर्थ गए हत्यारा गया न पकडा रे ।
नरहत्या करने वाला नर लगता तगडा रे, सुनो०।।३२९।।

नर की हत्या हुई दूसरे दिन भी पुर मे वैसी रे ।
हाहाकार मचा कहते जन स्थिति यह कैसी रे, सुनो०।।३३०।।

ऋषि के मुख पर लगे खून के धब्बे पति ने भाले रे ।
पड़े मांस के खंड पास में इतउत डालेरे, सुनो०।।३३१।।

ऋषि को जगा दिखाया मुखड़ा और मांस के टुकड़े रे।
विषम तत्व बदनाम रहा कर देकर दुखड़े रे, सुनो०।।३३२।।

मुंह धुलवाकर मांस खंड फिकवाये फिर नाली में रे ।
राजकंवर को दोष न दीखा घरवाली में रे, सुनो०।।३३३।।

दे आश्वासन बाहर आया समाचार सब पाया रे ।
पूज्य पिताश्री के चरणों में शीश नवाया रे, सुनो०।।३३४।।

कहा पिता ने हाथ लगा नहीं अब तक वह हत्यारा रे ।
जाल बिछादो गुप्तचरों का कर हुशियारा रे, सुनो०।।३३५।।

गए मंत्रणालय में सेनापति सह राजकंवरजी रे।
बडा असाधारण हत्यारा या निशिमरजी रे, सुनो०।।३३६।।

कर दी गई व्यवस्था सौंपी सबको जिम्मेवारी रे ।
चिंतित थे पुरवासी प्यारे सब नर नारी रे, सुनो०।।३३७।।

आसपास अज्ञात व्यक्ति छुपकर ना आने पाये रे ।
सैनिक दल हो गया संगठित शहर जगाये रे, सुनो०।।३३८।।

काल रात्रि का तिमिरधरापर इधर उतर कर आता रे ।
राजकंवर ऋषिदत्ता को आश्वस्त बनाता रे, सुनो०।।३३९।।

कर दरवाजे बंद महल के नैन मूंद ऋषि सोई रे ।
जगता रहा कंवर आ पाए अन्य न कोई रे, सुनो०।।३४०।।

ऋषि न जा सके नही आ सके मास डालने वाला रे।
मन्द मन्द दीपक का उसने करा उजाला रे, सुनो०॥३४१॥
आश्रम की स्मृति रही उभरती राजकवर मनमाही रे।
कभी प्रहरियो की पदध्वनि दे रही सुनाई रे, सुनो०॥३४२॥
मध्यरात्रि के वाद कवर को नीद आ गई गहरी रे।
पकड न पाये हत्यारे को कोई प्रहरी रे, सुनो० ॥३४३॥
प्रात उठकर देखा ऋषि मुख सना खून से सारा रे।
पडे मास के खड, न दिखता कोई हत्यारा रे, सुनो०॥३४४॥
जगा उसे मुह धुलवाया फिकवाये टुकडे सारे रे।
जब तक चोर न पकडा जाये किसको मारे रे, सुनो०॥३४५॥
ऋषि सासु के पास गई अपना दायित्व निभाने रे।
राजकवर आ लगा पिता को शीष झुकाने रे,सुनो०॥३४६॥
समाचार आया वालक की हत्या हुई करारी रे।
शोर मचाती जनता मिलकर आई सारी रे, सुनो०॥३४७॥
चुप्पी साधे हुए भूपति सुनते ध्यान लगाकर रे।
सुत से पिता मागते समुचित कोई उत्तर रे, सुनो०॥३४८॥
प्रिय सतान समान प्रजा की रक्षा अपने उपर रे।
दर्द सुनू देखू कैसे मैं राजा बनकर रे, सुनो०॥३४९॥
वयोवृद्ध मत्री, नृप, नृपसुत बैठ मत्रणा करते रे।
क्यो निर्दोप लोग पुरवासी ऐसे मरते रे, सुनो०॥३५०॥

हत्यारा मानव होता तो कहां भाग कर जाता रे ।
किसी गुप्तचर या प्रहरी के नजरों आता रे, सुनो०।।३५१।

असुर पिशाच दैत्य या दानव है कोई हत्यारा रे ।
दुष्ट वासना पूरी करता हत्या द्वारा रे, सुनो०।।३५२।

दैवी तत्त्व बिना उस पर हम विजय नहीं पा सकते रे ।
हार आसुरी बल हो आखिर देखो थकते रे, सुनो०।।३५३।।

योगी सन्यासी साधक के पास शक्तियाँ मिलती रे ।
चमत्कार बतलाने वाली कलियां खिलती रे, सुनो०।।३५४।।

मोक्षमार्ग के आराधक कुछ काम न ऐसा करते रे ।
धर्म देशना देने वाले संत विचरते रे, सुनो०।।३५५।

बुला योगियों से ही इसका रास्ता पूछा जाये रे ।
तीनों सहमत होकर के अब सभा बुलाये रे, सुनो०।।३५६।।

ढिंढोरा पिटवाया पुर में आओ सब संन्यासी रे ।
चमत्कार दिखला कर काटो दुःख की फांसी रे, सुनो०।।३५७

सौ लगभग योगीजन आये दे आदर बिठलाया रे ।
राजा ने सविनय दुख पुर का स्पष्ट सुनाया रे, सुनो०।।३५८।।

शक्ति उपासक आप लोग कुछ चमत्कार दिखालाओ रे ।
प्रजा प्रजापति को आफत से आप बचाओ रे, सुनो०।।३५९।।

चुप क्यों बैठ गए हो सारे परचा हमें बताओ रे ।
मंत्र तंत्र जप लिखकर बाधा दूर हटाओ रे, सुनो०।।३६०।।

लगे परस्पर मुह ताकने जोगी बाबा सारे रे।
राजा अपना गुस्सा इन पर वही उतारे, रे सुनो०।।३६१।।

ढोंगे हाक हाक लोगो को ठग कर खाने वाले रे।
तुम हो अपना उल्लू सीधा करने वाले रे, सुनो०।।३६२।।

मेरा काम करो वरना मैं यहा न रहने दूगा रे।
स्पष्ट स्पष्ट उत्तर मैं सबसे अब मागू गा रे, सुनो०।।३६३।।

नृप ने आज्ञा दी मत्री को पुर से इन्हे निकालो रे।
जो सीजे ना धान्य उसे क्यो व्यर्थ उबालो रे सुनो०।।३६४।।

उठकर जाने लगे सभी इतने मे योगिनी आई रे।
कहा आपके प्रश्नो का उत्तर मैं लाई रे, सुनो०।।३६५।।

नृप ने स्वागत किया बताओ कौन पुरुष हत्यारा रे।
तुमने उसको पहचाना किस शक्ति द्वारा रे, सुनो०।।३६६।।

आँखे मूद योगिनी बोली-सपन रात को आया रे।
एक देव ने मेरे को सब हाल सुनाया रे, सुनो०।।३६७।।

कल नृप सब से पूछेगा पर देगा कोई न उत्तर रे।
उन्हे निकालेगा तू जाकर कहना व्यतिकर रे, सुनो०।।३६८।।

हत्या करने वाला व्यक्ति राजमहल का वासी रे।
राजकवर की पत्नी है वो, है नही दासी रे, सुनो०।।३६९।।

जगल से लाये है जिसको वो जगल की डायन रे।
करें न सतो को अपमानित मानो राजन रे सुनो०।।३७०।।

और आपको ही कुछ बातें आवश्यक बतलानी रे ।
राजा ने कर दिया इशारा समझे ज्ञानी रे, सुनो०॥३७१॥

महासचिव सेनापति नृप सुत चले गये उठ बाहर रे ।
ऋषि से मिलने महलों में चल आया कुंवर रे, सुनो०॥३७२॥

जाकर पड़ा पलंग पर कुंवर ऋषि घबराकर बोली रे ।
क्यों हैं इतने व्यथित कहो तो समझूं भोली रे, सुनो०॥३७३॥

राजसभा की बात बताकर कंवर कहे धर साहस रे ।
कृतकर्मों के आगे प्रानी होता परवश रे सुनो०॥३७४॥

बिना आसुरी ताकत के महलों में कैसे आये रे ।
खंड मांस के यहां बिखेरे मुंह रंग जाये रे, सुनो०॥३७५॥

तुझे दुखी करने का लगता उसका सही इरादा रे ।
और करे बदनाम तुम्हें ज्यादा से ज्यादा रे, सुनो०॥३७६॥

संन्यासिनी कहेगी उस पर नृप विश्वास करेंगे रे ।
किन्तु किसी भी हालत में हम नहीं डरेंगे रे, सुनो०॥३७७॥

वहीं मार देता मैं उसको ऐसा गुस्सा आया रे ।
मर्यादा ने रोक दिया मन को समझाया रे, सुनो०॥३७८॥

ऋषि बोली जो भी होगा फल भुगतूंगी मैं सारा रे ।
कष्ट आपको जरा न होवे मेरे द्वारा रे, सुनो०॥३७९॥

भिजवा दिया यहीं पर भोजन गये नहीं ये करने रे ।
माता मदद करे मन का दुख चिंता हरने रे सुनो०॥३८०॥

थोडी देर वाद मे नृप का इन्हे बुलावा आया रे।
गया पुत्र नृप ने निज मुख से यो फरमाया रे, सुनो०॥३८१॥
मेरी तवियत ठीक नही है लगता ऐसे वैसे रे।
सुत ने कहा वैद्य वुलवाऊ जँचता कैसे रे, सुनो०॥३८२॥
अभी नही फिर वुलवा लेंगे होगी अगर जरूरत रे।
सोना मेरे पास विगडना जाये सेहत रे, सुनो०॥३८३॥
आग्रह करके राजवैद्य को कवर वुला ही लेता रे।
नाड दिखा करके अत्युत्तम औपधि देता रे, सुनो०॥३८४॥
सोना मेरे पास रात मे वेटे चाहे जैसे रे।
विगडा स्वास्थ्य विगडता है भट समझो ऐसे रे, सुनो०॥३८५॥
समझ गया सुत स्वास्थ्य न कारण कारण हे ऋपिदत्ता रे।
पडा न सोना मुझे आज तक हिला न पत्ता रे, सुनो०॥३८६॥
भाल लिया करतो थो माता रात विरात हमेशा रे।
आज मुझे ही रहना है यह कारण कैसा रे, सुनो०॥३८७॥
ऋपि की क्या हालत होगी जो मैं न महल मे सोया रे।
भरा खून से मुह उसका नित मैंने धोया रे, सुनो०॥३८८॥
कैसे कहू पिताजी से मै यहा नही सो सकता रे।
नृप की आज्ञा का उल्लघन नही हो सकता रे, सुनो०॥३८९॥
अच्छा कह करके नरवर से कवर महल मे आता रे।
राजा वोला जल्दी आना यदि तू जाता रे, सुनो०॥३९०॥

हां आया कहकर महलों में ऋषि के पास खड़ा है रे।
ऋषि बोली क्यों उदासीन क्यों फिक्र बड़ा है रे, सुनो०॥३९१॥

ऋषि से सारी बात बताई सावधान तूं रहना रे।
उठ अपना मुंह धो लेना न किसी से कहना रे, सुनो०॥३९२॥

सुनकर ऋषि औंधे सिर गिरकर फफक-फफक कर रोती रे।
दुख के समय स्त्रियों की ऐसी ही स्थिति होती रे,सु०॥३९३॥

कंवर पिता के पास आ गया ऋषि रह गई अकेली रे।
गहरे गड्ढे में कर्मो ने इसे धकेली रे, सुनो० ॥३९४॥

होगा जो होने वाला है कहते आये ज्ञानी रे।
ज्ञानी की वानी अभिमानी ने कब मानी रे, सुनो०॥३९५॥

हुआ सदा की भांति कांड जो होता रहा हमेशा रे।
साधारण नर कहता है यह चक्कर कैसा रे, सुनो०॥३९६॥

नींद रात भर ली न कंवर ने मन में बहुत उदासी रे।
आने वाला समय पता क्या आफत लासी रे, सुनो०॥३९७॥

हुआ उजाला समाचार इतने में ऐसा आया रे।
नर की हत्या हुई आज भी नृप घबराया रे, सुनो०॥३९८॥

गुप्तचरों ने आंखों देखा सारा हाल सुनाया रे।
युवरानी का मुंह लोही से खरडा पाया रे, सुनो०॥३९९॥

बिखरे हुए मांस के टुकड़े दिखते है बाहर से रे।
अभी सभी हम आए कहने श्री. नरवर से रे सुनो०॥४००॥

ऋषि को छुडवाने रानी जी रोती रही विचारी रे।
सास वहू को वहू सास को होती प्यारी रे, सुनो०॥४२१॥
ऋषि को जल्लादो को सौंपा आज्ञा एक सुनाई रे।
घुमा शहर मे देना वाते साफ वताई रे, सुनो०॥४२२॥
इसने की हत्याये सारी है ये डाकरण नारी रे।
इसे मार देने की आज्ञा है सरकारी रे, सुनो०॥४२३॥
कवर पडा वेहोश होश खो वैठी है महारानी रे।
दास दासियो की आखो से वहता पानी रे, सुनो०॥४२४॥
राजा के विपरीत किसी की निकल न पाती वानी रे।
देखी सुनी नही जाती है करुण कहानी रे, सुनो०॥४२५॥
कहने सुनने वालो के मन दया उभरकर आती रे।
हत्यारो की वज्र सरीखी होती छाती रे, सुनो०॥४२६॥
वधिक ले गए ऋषि को पुर मे मचा वडा कोलाहल रे।
वडे पहलवानो का मानो होना दगल रे, सुनो०॥४२७॥
सुला दिया है राजकवर को एक पलग विछाकर रे।
वैठ गए नृप वही पास मे चिंतित होकर रे, सुनो०॥४२८॥
पहरेदार लगाते पहरा दरवाजे के वाहर रे।
कोई जा आ नही सके महलो के भीतर रे, सुनो०॥४२९॥
आया होश कवर ने अपनी थोडी आखे खोली रे।
देख पिता को खोल न पाया अपनी वोली रे, सुनो०॥४३०॥

पानी दूं यूं पूछ लिया है पूज्य पिता ने धीरे रे।
मना किया सिर हिला कंवर ने छाती चीरे रे, सुनो०॥४३१॥
घृणा हो चुकी राजकंवर को जनक महल से सुख से रे।
व्यथित हो रहा रोम-२ ऋषि वाले दुख से रे, सुनो०॥४३२॥
ऋषि मैं तेरे पास आ रहा कहता सुत चिल्लाकर रे।
सुला दिया राजा ने फिर से मन झल्लाकर रे, सुनो०॥४३३॥
बीत गये दिन तीन कंवर ने कुछ ना पीया खाया रे।
घबडा उठे पिताजी यह क्या संकट आया रे, सुनो०॥४३४॥
मना सके तो मना पुत्र को नृप कहता रानी से रे।
मेरे से है रोष रोष क्या अनपानी से रे, सुनो०॥४३५॥
रानी ने राजा को महलों से बाहर भिजवाया रे।
पहरेदारों को हटवाया द्वार खुलाया रे, सुनो०॥४३६॥
लिया गोद में बेटे का सिर आंसू लगी गिराने रे।
भूखी प्यासी बैठी सुत को दे सिरहाने रे, सुनो०॥४३७॥
मां का मुखडा पोंछा सुत ने अपने ही हाथों से रे।
रो मत मां कुछ लाभ नहीं इन सब बातों से रे,सुनो०॥४३८॥
रोने सिवा रहा क्या बाकी बेटे इस जीवन में रे।
देवी जैसी बहू गई मरने को वन में रे, सुनो०॥४३९॥
मां बेटे दोनों ही रोते ऋषि को सुमर सुमर कर रे।
दोनों के मुख से न निकलता कोई अक्षर रे, सुनो०॥४४०॥

वेटे ! पय या पानी कुछ भी लेगा या नही लेगा रे ।
मा का जीवन लेगा अपना जीवन देगा रे, सुनो०।।४४१।।
आई एक वसता दासी कहती ऐसी वानी रे ।
रानी ने भी लिया नहीं है अन्न या पानी रे, सुनो०।।४४२।।
लोगे आप तभी मा लेगी मा की ओर निहारो रे ।
मरो न अपनी प्यारी माँ को भूखी मारो रे, सुनो०।।४४३।।
ऋषि को क्या ले गए महल से दासी से यों पूछा रे ।
तू न साथ क्या गई सुनादे हाल समूचा रे, सुनो०।।४४४।।
मुझे कौन जाने देते थे गए उसी को लेकर रे ।
चोरी छुपे गई थी लेकिन पुर से वाहर रे, सुनो०।।४४५।।
कैसे उसको ले गए ऐसा पूछ रहा है कुवर रे ।
आप अन्न जल लो पीछे कह दूगी व्यतिकर रे, सुनो०।।४४६।।
माँ भी वोली वेटे पानी पीले थोडा खा ले रे ।
औपधि ले मन स्वस्थ बनाले दुख मिटाले रे, सुनो०।।४४७।।
हाल हुआ होगा क्या ऋपि का मा मै पहले जानू रे ।
वे जरलाद इसे वक्से ये कैसे मानू रे, सुनो०।।४४८।।
उसका धर्म साथ है उसके वो ही है रखवाला रे ।
महासती सन्नारी है वो अमृत प्याला रे, सुनो०।।४४६।।
सिर पर हाथ फिराती माता बोली पीले पानी रे ।
ली दो चार घूट कुवर ने जिद नहीं तानी रे, सुनो०।।४५०।।

राजवैद्य आए इतने में बैठे पाकर आसन रे।
नाडी देख बताते औषधि अति साधारन रे, सुनो०॥४५१॥
उतर जायगा ज्वर त्वरता से होंगे स्वस्थ कुंवरजी रे।
काम करेगी दवा हमारी प्रभु की मरजी रे सुनो०॥४५२॥
वैद्य गए दे दवा पिलाया मां ने पय ले ताजा रे।
आई नींद शांति से सोया वह युवराजा रे, सुनो०॥४५३॥
हुआ सवेरा स्नान किया फिर बदले कपड़े तन के रे।
लेकिन घाव नहीं भर पाये अंतर मन के रे, सुनो०॥४५४॥
माँ आई ले दूध कटोरा झटसे उसे पिलाया रे।
दासी ने आ ऋषि का सारा हाल सुनाया रे, सुनो०॥४५५॥
पूरे तन को काला करके श्रीफल बांधे सिर पर रे।
सारे रास्ते बरसाते थे कुंकुम उपर रे, सुनो०॥४५६॥
पांवों में बांधे थे घुंघरू ढोली ढोल बजाते रे।
पूरे पुर में उसे घुमाया घृणा दिखाते रे, सुनो०॥४५७॥
नागरिकों को हाल सुनाते हुए उसे ले जाते रे।
अररर अररर कह पुरवासी थे चिल्लाते रे, सुनो०॥४५८॥
किया कलंकित किसने इसको स्त्रियाँ परस्पर कहती रे।
बोले कौन सामने नृप के जनता सहती रे, सुनो०॥४५९॥
छिप छिपकर आगे पीछे मैं उसके साथ चली थी रे।
शमशानों में पहुंच गई तब शाम ढली थी रे, सुनो०॥४६०॥

रवि दुख देख न पाया उसका उसने मुँह छिपाया रे ।
मैं मेरे घर आई ये सब हाल सुनाया रे, सुनो०।।४६१।।

सुन वर्णन श्री राजकु वर जा खडा झरोखे माही रे ।
अपनी कायरता पर मन मे ग्लानि छाई रे, सुनो०।।४६२।।

ऋपि को बचा न पाया कोई उत्तर देना पाया रे ।
पूज्य पिताजी को विश्वास नही क्यो आया रे, सुनो०।।४६३।।

ऋपि के प्रति हमदर्दी दिखलाते थे सारे पुरजन रे ।
पता न उसको माना क्यो अपराधन पापन रे, सुनो०।।४६४।।

अच्छी लगने लगी मौत अब जीवन लगता खारा रे ।
दिन भर भीतर ही रहता है दुख का मारा रे, सुनो०।।४६५।।
गई जहाँ ऋपि जाऊँ मै भी वहाँ उसे मिल पाऊँ रे ।

परभव मे मिलने के खातिर अब मर जाऊँ रे, सुनो०।।४६।।
घृणा पिता से हुई न उनके दर्शन करने जाता रे ।
सम्हालने को आती रहती इसकी माता रे, सुनो०।।४६७।।
मा से बोला चलो ऋपभ प्रभु के मदिर मे जाये रे ।
दर्शन पूजन करके मनको शात बनाये रे, सुनो०।।४६८।।

आश्रम की पावनता से तू बहुत प्रभावित होगी रे ।
अपने बेटे को फिर शाबासी ही दोगी रे, सुनो०।।४६९।।
माँ बोली हा अपन चलेगे दर्शन वहा करेगे रे ।
कर्मबधनो से छूटेंगे पार तरेगे रे, सुनो० ।।४७०।।

कहा कंवर ने महलों में अब मुझे नहीं आकर्षण रे ।
आश्रम में जाकर जीऊँगा सारा जीवन रे, सुनो०।।४७१।।
मां ने दी न इजाजत जीता सादाई से घर पर रे ।
ऋषि को भूल नहीं पाता है सारी ऊमर रे, सुनो०।।४७२।।
राजा ने सोचा था दुख की दवा बताई है दिन रे ।
कुंवर भूल जाएगा ऋषि को दुख को गिन गिन रे,।।४७३।।
समझाने की चेष्टा की करलो अब दूजी शादी रे ।
कुंवर नहीं कैसे भी माना बात भूलादी रे, सुनो०।।४७४।।
बीते साल जिन्दगी बीते ऋषि को भूल न पाता रे ।
ऋषि के सिवा किसी को साथिन नहीं बनाता रे,सुनो०।।४७५।।
इक दिन माँ ले आई कोई एक नया संदेशा रे ।
किया प्रणाम किया करता था यथा हमेशा रे, सुनो०।।४७६।।
सीधी राजसभा से आई तेरे पास यहां पर रे ।
दूत अभी कावेरी से आया खत लेकर रे, सुनो०।।४७७।।
राजसुता रूक्मिणी प्रतिज्ञा ले बैठी है ऐसी रे ।
आया क्यों न कनकरथ ब्याहने घटना कैसी रे, सुनो०।।४७८।।
सिवा कनक के मैं औरों से ब्याह न करवाऊंगी रे ।
भले उम्र भर मैं क्वारी ही रह जाऊंगी रे, सुनो०।।४७९।।
तेरे पूज्य पिताजी से नृप ने कहलाया ऐसे रे ।
भिजवाओ समझा कर सुत को जैसे तैसे रे, सुनो०।।४८०।।

प्रश्न सुता के जीवन का है सोचे गहराई से रे।
कहता हू मै शीश झुकाकर नरमाई से रे, सुनो०॥४८१॥
तेरे पूज्य पिताजी ने सब बाते मुझे सुनाई रे।
समझाने को तुझे मुझे ही है भिजवाई रे, सुनो०॥४८२॥
होना सो हो गया उसे तू बेटा अभी भुलादे रे।
कर विचार उस कन्या का मत जीव रुलादे रे, सुनो०॥४८३॥
मा तू यह क्या कहती मै क्या करु दूसरी शादी रे।
कन्या के सिर ढोलूं मेरी यह बरबादी रे, सुनो०॥४८४॥
ऋषि के सिवा स्थान इस दिल मे अन्य न कोई लेगी रे।
ऋषि ने जो सुख दिया नही वो सुख भी देगी रे,सुनो०॥४८५॥
सिर पर बाध सेहरा निकलू बजवाऊं शहनाई रे।
ऋषि को भूलूं ऐसी बातें मन न सुहाई रे, सुनो०॥४८६॥
मुझे न सुनना मुझे न करना मा चुप होकर रहना रे।
मै न मानता पूज्य पिता से जाकर कहना रे, सुनो०॥४८७॥
मा बोली बेटे मै तेरी समझ रही हू पीडा रे।
तेरी पीडा मेरे सिर दे रही धमीडा रे, सुनो०॥४८८॥
राजमहल मे रहते है हम सास न सुख की लेते रे।
किसको दोप दोप कर्मो को आखिर देते रे, सुनो०॥४८९॥
राजभोग सुख मुझे स्वय को लगते विप सम खारे रे।
सोच रही हू धन्य श्रमणिया जन्म सुधारे रे सुनो०॥४९०॥

माँ के मुंह से सुनी कुंवर ने बातें अंतर मन की रे।
भूल गया दुख अपना सोची परिवर्तन की रे, सुनो०।।४९२
मैं क्या करूं बता मां तूं ही जो जंचता तेरे को रे।
मन बेमन से स्वीकृत होगा वो मेरे को रे, सुनो०।।४९३
कावेरीं जा रूकमण से तूं करले अपनी शादी रे।
हित हैं इसमें हम सबका यह बात बिठादी रे सुनो०।।४९४
प्रसन्नता होगी क्या इससे स्पष्ट बतादे माता रे।
मां बोली मैं क्या राजा का मन यह चाहता रे, सुनो०।।४९
मैं तो शांति तभी पाऊंगी जब जग को त्यागूंगी रे।
प्रभु चरणों में महाव्रतों की दीक्षा लूँगी रे, सुनो०।।४९६
अभी नहीं जा सकती हूं कर्त्तव्य निभाना बाकी रे।
करूं बता क्या रीत यही आई दुनिया की रे, सुनो०।।४९७
बेटे पूज्य पिताजी का मन खुश तेरे को रखना रे।
स्थितिवश जो भी किया उन्होंने उसको ढकना रे,सुनो०।।४९८
करती प्रीति प्रगाढ रूक्मिणी उसकी ओर निहारो रे।
स्त्री के ऊपर दयाभाव ला उसे उबारो रे, सुनो०।।४९९
ऋषि रूकमण में अंतर क्या है नारी आखिर नारी रे।
तेरे ब्याहे बिना रहेगी अकन कंवारी रे, सुनो०।।५००

increase in the angular momentum of the atom is—

(1) 6.63×10^{-34} J-

lo
(3) B
(4) T

सुख देकर सुख पा सकता नर नियम प्रकृति का मानो रे।
वडे सयाने होकर वेटे जिद मत तानो रे, सुनो०॥५०१॥
है अनुराग नही उसके प्रति सुख क्या दे पाऊगा रे।
तडफूगा मैं और उसे भी तडफाऊगा रे, सुनो०॥५०२॥
वेटे मन की स्थिति न एक सी रही नही रह पाती रे।
आज द्वेष कल प्यार करे स्थिति पलटा खाती रे, सु०॥५०३॥
पूज्य पिताजी के प्रति कितना स्नेहभाव था पहले रे।
आज वडा अलगाव हो गया ऋषि के वदले रे,सुनो०॥५०४॥
प्यार नही कर पाया तो माँ होगी कैसी हालत रे।
मा वोली वेटे फिर देखो जैसी किस्मत रे, सुनो०॥५०५॥
दीप पुण्य का जलता जव तक अधेरा न सताता रे।
वुझते ही दुख का अधेरा खूब रुलाता रे, सुनो०॥५०६॥
अच्छी तरह सोचले दू गी, हर प्रश्नो का उत्तर रे।
मे तेरी मा तू है मेरा प्यारा पुत्तर रे, सुनो०॥५०७॥
तुझसे ज्यादा अनुभव मुझको तू तो कल का जाया रे।
तैंने क्या देखा है अव तक पीया खाया रे, सुनो०॥५०८॥
अनुभवियो की वातें होती वजनदार हितकारी रे।
चाहे किसी उम्र वाला हो, नर या नारी रे, सुनो०॥५०९॥
ऋषिदत्ता वाला आश्रम भी उसी मार्ग मे आता रे।
वहा तुझे जाना भी है फिर क्यो सकुचाता रे, सुनो०५१०॥

यों तुझको ना जाने देते, ऐसे जाने देंगे रे ।
तेरे कामों में बाधायें क्यों डालेंगे रे, सुनो०॥५११॥

इतना सुनते ही कुंवर का मन भीतर से डोला रे ।
हां कावेरी जाऊँगा यों माँ से बोला रे, सुनो०॥५१२॥

मां ने खुश हो सुत सिर चूमा नृप के पास गई है रे ।
सुत से जो भी बात हुई वो स्पष्ट कही है रे, सुनो०॥५१३॥

नृप ने सैनिक हटा लिये हैं कहीं भले ये जाये रे ।
नृप के सिर का भार हट गया मन हरखाये रे, सुनो०॥५१४॥

कावेरी की ओर रवाना हुआ कनकरथ कुंवर रे ।
सब परिवार प्रसन्न हुआ है व्यतिकर सुनकर रे,सुनो०॥५१५॥

हृदय वेदना से परिपीड़ित स्मित संसार दिखाऊ रे ।
सेवक सेना सचिव सखा सह मन बहलाऊ रे, सुनो०॥५१६॥

जिस पथ से ऋषि को लाया था उस रास्ते से जावे रे ।
ऋषि के बोये हुए वृक्ष लख याद सतावे रे, सुनो० ॥५१७॥

वे ही झरने और जलाशय वो ही वन हरियाली रे ।
केवल ऋषि वो साथ नहीं सुख देने वाली रे, सुनो०॥५१८॥

आवश्यक कार्यों के कारण रूकते मन सुख पाते रे ।
चलते चलते उसी स्थान पर सब आ जाते रे, सुनो०॥५१९॥

उस वन की सुषमा से तन के रोयें पुलकित बनते रे ।
निर्दोषी विहगों का कलरव सुखकर सुनते रे, सुनो०॥५२०॥

सौंदर्यानुभूति करने को कु वर न वन मे आया रे ।
इच्छाये मर चुकी मात्र जीवित है काया रे, सनो०॥५२१॥

सूचित किया सचिव को रथ उस ओर दौडता जाता रे ।
ऋषभदेव जिनवर का मदिर नजर समाता रे, सुनो०॥५२२॥

नयनरम्य प्रभु की मूर्ति मन प्रेम अधिक उपजाती रे ।
दर्शन पूजन की विधि सारी इसको आती रे, सुनो०॥५२३॥

पहुच पडाव डाल मदिर मे दर्शन करने जाता रे ।
कर प्रणिपात मू दकर आखे ध्यान लगाता रे, सुनो०॥५२४॥

भूल गया दुख दर्द हृदय मे लेता हर्ष हिलोरा रे ।
जीव अभव्य रहा करता है, कोरा कोरा रे, सुनो०॥५२५॥

करुणामृत वरसाती प्रभु की मूरति नयन समाई रे ।
परभव मे जो साथ चले यह वही कमाई रे, सुनो०॥५२६॥

मदिर से जब निकला सम्मुख ऋषिकु वर इक आता रे ।
सुमन हाथ मे प्यार आख मे बहुत सुहाता रे, सुनो०॥५२७॥

उसने इसको इसने उसको प्रेम सहित अवलोका रे ।
दिया इसे फूलो का गुच्छा हृदय अशोका रे, सुनो०॥५२८॥

आदर सहित सुमन ले ऋषि का स्वागत मुख से करता रे ।
ऋषि मदिर मे गया प्रेमरस झरणा झरता रे,सुनो०॥५२९॥

करता कनक विचार ऋषि ये यहा कहा से आया रे ।
विनय विवेक भरा है इसमे मुझको भाया रे, सुनो०॥५३०॥

उसके पीछे यह भी मंदिर में ही गया दुबारा रे ।
फूल रख दिये प्रभु चरणों में भावों द्वारा रे, सुनो०।।५३१।।

जब दोनों मंदिर से बाहर आये तब यह बोला रे ।
आप छावनी में आयेंगे अमृत घोला रे, सुनो०।।५३२।।

ऋषिकुमार पूछता परिचय मुझे दीजिये अपना रे ।
बोला कनक वहीं पर सारा होगा सपना रे, सुनो०।।५३३।।

इसे छावनी में ले आया आदर से बिठलाया रे ।
अति आग्रह पूर्वक इसको भोजन करवाया रे, सुनो०।।५३४।।

ऋषिकुमार अब मुझे दीजिये परिचय अपना प्यारा रे।
परिचय द्वारा पुष्ट बनेगा प्रेम हमारा रे, सुनो०।।५३५।।

रहते थे हरिषेण राजऋषि पहले इस ही वन में रे ।
ऋषिदत्ता कन्या थी उनके ऊंची गुण में रे, सुनो०।।५३६।।

राजकुंवर से प्यार हो गया कर दी उससे शादी रे ।
हरयुग में रहती शादी की कुछ आजादी रे, सुनो०।।५३७।।

अग्नि प्रवेश किया मुनिवर ने ऋषि ससुराल पधारी रे।
सूनी हुई तभी से वन की सुषमा सारी रे, सुनो०।।५३८।।

परिभ्रमण पृथ्वी पर करता यहाँ अचानक आया रे ।
ऋषिभदेव का मंदिर मेरे मन को भाया रे, सुनो०।।५३९।।

मैं रह गया यहीं पर तब से परिचय सत्य सुनाया रे ।
शब्दों में माधुर्य शहद सा मीठा पाया रे, सुनो०।।५४०।।

राजकुवर ने अपना परिचय दिया प्रेम से सारा रे ।
कुछ न छुपाने का होता है मित्रो द्वारा रे, सुनो०॥५४१॥

कहा कनक ने धन्य हुआ मैं ऋषिदर्शन के द्वारा रे ।
ऋषिकुवर बोला मनभावन विनय तुम्हारा रे, सुनो०॥५४२॥

राजकवर बोला क्यो मेरा मन आकर्षित होया रे ।
तृप्ति न होती रहूँ देखता खोया खोया रे, सुनो०॥५४३॥

सुनकर ऋषि हस रहा जोर से लग गया ज्ञान सुनाने रे ।
पूर्वजन्म के सबधो से हम अनजाने रे, सुनो०॥५४४॥

वैर स्नेह का कारण होता वह सबध हमारा रे ।
कभी नया बधन पड जाता परिचय द्वारा रे, सुनो०॥५४५॥

मेरे साथ आपका कोई है सबध पुराना रे ।
इसीलिए इस प्रथम मिलन मे प्रेम लगाना रे, सुनो०॥५४६॥

ऋषि बोले अनजान व्यक्ति के साथ प्रेम मत करिये रे ।
उसमे भी मैं तो ऋषि हूँ यह सत्य समरिये रे,सुनो०॥५४७॥
आज यहाँ कल अन्य कही पर हमको होता जाना रे ।
मेरे लिये नही है अच्छा स्नेह बढाना रे, सुनो०॥५४८॥
आप मुसाफिर रुक कर अपने स्थान चले जाओगे रे ।
स्नेह बाध कर मेरे से यो पछताओगे रे, सुनो०॥५४९॥
देता दु ख वियोग हमेशा समझाले निजमन को रे ।
जय ऋषभ कहकर ऋषि चलने लगे भवन को रे, सु०॥५५०॥

कुंवर द्वार तक पहुंचा करके लौट स्थान पर आया रे ।
ऋषि मरने के बाद आज ही मन हरषाया रे,सुनो०।।५५१।।
तप्त हृदय पर चन्दन का सा मानो लेप लगाया रे ।
मन में एक विचार नया उदय हो आया रे, सुनो०।।५५२।।
मेरे साथ न आ सकते ऋषि विनय अवश्य करूंगा रे ।
साथ-२ रहने को उनको मनवा लूंगा रे, सुनो०।।५५३।।
वैरागी त्यागी है फिर भी करूणा तो कर देंगे रे ।
क्या मेरे अनुनय को झोली में ना लेंगे रे, सुनो०।।५५४।।
कल मैं उनसे पूछूंगा जब जाऊंगा जिनमंदिर रे ।
मन की शंकाओं का निर्णय करना आखिर रे, सुनो०।।५५५।।

ऐसे सोच गया सो सुख से आई निंदिया रानी रे ।
प्रसन्नता से पुलकित रजनी बनी सुहानी रे, सुनो०।।५५६।।
प्रातः कुंवर गया मंदिर में ऋषि को ऊभा देखा रे ।
दोनों के मुख पर बिखरी है स्मित की रेखा रे, सुनो०।।५५७।।
आओ चले आरती करलें कहा कुंवर से ऐसे रे ।
राह आपकी देख रहा मैं भूलूं कैसे रे, सुनो०।।५५८।।
दोनों ने आरती उतारी आदिनाथ जिनवर की रे ।
ऋषिदत्ता की सी आकृति लगती ऋषिवर की रे, सु०।।५५९।।
बाहर आ ऋषि बोला मेरे आश्रम में तुम आये रे ।
एक दूसरे पर श्रुतचर्चा कर बतियायें रे, सुनो०।।५६०।।

चलिये मेरे यहा आप ही विनय मानिये मेरा रे ।
ऋषि ने कहा चले होने को हे अधेरा रे, सुनो०॥५६१॥

कु वर हुआ आनन्दित सुनकर ऋषि को घर ले आया रे ।
गले लगालू इसे अभी यो मन हरखाया रे, सुनो०॥५६२॥

मर्यादा ने रोक लिया में भोगी हू ये त्यागी रे ।
ससारी रागी होते ऋषि लोग विरागी रे, सुनो०॥५६३॥

भग नही हो जाय उचितता ध्यान पूर्णत रखता रे ।
ऋषि मे ऋषि की पूर्ण मधुरता चखता लखता रे, सु०॥५६४॥

पर्णकुटी मे आये सेवक प्रहरी शीश नमावे रे ।
राजकवर के लिये दूध का प्याला लावे रे, सुनो०॥५६५॥

इसने ऋषि से कहा पीजिये ऋषि ने शीश हिलाया रे ।
मैं न रात मे जल भी पीता नियम बताया रे, सुनो०॥५६६॥

राजकवर ने भी न पिया पय, केवल जल ही पीया रे ।
झिलमिल झिलमिल करता मद्धिम जलता दीया रे,सु०॥५६७॥

काष्ठासन पर बैठे मिलकर लगी बात अब होने रे ।
बहुत पसद मुझे इस वन के सादे कोने रे, सुनो०॥५६८॥

पहले भी आया था तब कुछ दिन तक रुका यहा पर रे ।
जीवित थे राजर्षि स्वय तब सुनलो ऋषिवर रे,सुनो०॥५६९॥

अग्निप्रवेश किया उनने तब स्वय यही हाजिर रे ।
अच्छा[1] तो उनकी पुत्री यो बोले ऋषिवर रे, सुनो०५७०॥

हां, मैंने ही पाणिग्रहण कर लिया ले गया निजपुर रे ।
अच्छा, तो वह साथ नहीं क्यों दे दो उत्तर रे, सुनो०।।५७१।।

दिया जाय इसका क्या उत्तर निकल नहीं पाया स्वर रे।
हां! वह मेरे साथ नहीं यों कहता रुककर रे, सुनो०।।५७२।।

बात व्यक्तिगत कुंवर तुम्हारी मुझे पूछ क्या लेना रे ।
पूछा इसके लिये क्षमा मन से कर देना रे, सुनो०।।५७३।।

ढ़ाल छट्ठी

सुनलो ऋषिदत्ता रानी की पावन धर्म कहानी है।
पावन धर्म कहानी सुनकर बनना ज्ञानी है ।।टेर।।

तर्ज---पावन पुरुषोत्तम भगवान

नही-२ आत्मीय बन्धु तुम पूछो मना नही है।
प्रेम प्रश्न पीडा उपजाए ऐसा बना नही है, सुनलो०।।५७४।।

ऋषिदत्ता की याद रुलाती रहती मुझे हमेशा।
समग्रता से प्यार दिया था मैंने उसको ऐसा, सुनलो०।।५७५।।

लेकिन बचा न पाया उसको यह मेरी कमजोरी।
ऋषिकुमार देखता जाता उसकी सूरत भोरी,सुनलो०।।५७६।।

कह दी कथा आप बीती सब दर्द और गमवाली।
ब्याऊ रुक्मरण से यह मा की बात न जाए टाली, ।।५७७।।

नही मानता तो न यहा आता न आप मिल पाते।
लाभ बडा यह आप मिल गये, खुले प्रेम के खाते,सुन०।।५७८।।

करुण स्वर से ऋषि बोले हे जीवन करुण तुम्हारा।
कर्मों के आगे बेचारा जीव हमेशा हारा, सुनलो०।।५७६।।

बीत गये दो प्रहर रात के बोला राजकुमार।
मेरी एक विनति है, कृपया कर लेना स्वीकार,सुनो०।।५८०।।

मैंने मित्र आपको माना फिर यह विनती कैसी ।
जो कहना चाहो वो कहदो, उठी भावना जैसी,सुनलो.।।५८१।।
मेरे साथ आपको चलना होगा मेरे मित्र ।
काबेरी? शादी में? जाना है यह खेल विचित्र,सुनलो०।।५८२।।

साधु शादी में जाए है यह अनुचित जग व्यवहार ।
प्रेम भाव की पावनता को क्या समझे संसार,सुनलो०।।५८३।।
उचित और अनुचित जो भी हो छोडो उसकी बात ।
मुझे शांति देने को मेरे मित्र आइए साथ, सुनलो०।।५८४।।
ऋषिकुमार सोचता सुनकर मन ही मन से बात ।
टूटे दिलवाले कर लेते खुद ही की घात, सुनलो०।।५८५।।
साथ तुम्हारे आ जाऊं पर रह न सकूंगा नाथ ।
मैं वनवासी राजकंवर तुम मेल न खाए बात,सुनलो०।।५८६।।

राजकंवर का मित्र कभी क्या हो सकता वनवासी ।
पिता आपके मुझे आपको कब देंगे शाबासी,सुनलो०।।५८७।।
रानी रूक्मण को न लगे यह प्रेम हमारा अच्छा ।
स्त्री का राजाओं का होता बहुत कलेजा कच्चा,सु०।।५८८।।
ठेस किसी को लगे वहां पर, मुझसे रूका न जाता ।
मेरा हो अपमान कहीं तो टूट जायगा नाता,सुनलो०।।५८९।।
सोचा सुना सभी कुछ, बोला चलो अभी तो साथ ।
आगे की आगे देखेंगे समय प्रमाणे बात, सुनलो०।।५९०।।

लौटेगे इस ही राम्ते से अभी फिक्र क्या करना ।
साथ नही रहना हो तो तुम वन मे यही ठहरना,सु०॥५९१॥
ऋपि ने कहा साथ रहने से स्नेह वढेगा अपना ।
जव होगे हम जुदा सोच लो मुझे विरह से तपना,सु०॥५९२॥

तुम होवोगे राजमहल मे होगी सुख-सुविधाऐ ।
वन मे मुझे अकेले रहकर करनो धर्म क्रियाऐ, सुनलो०॥५९३॥
अभी छोड दो तो अच्छा है मत ले जाओ साथ ।
मित्र मित्र के लिये मानलो मै जो कहता वात,सुनलो०॥५९४॥

वन मे महल वनाकर के मं रहने यही लगूंगा ।
दोनो का मन लगा रहेगा मन को नही ठगूगा,सुनलो०।५९५॥

जव भी मुझे वुलावोगे तव हो जाऊगा हाजिर ।
राज काज सभालेगे सब वफादार मन्त्रीश्वर,सुनलो०॥५९६॥
राजकु वर के अत्याग्रह पर ऋपि ने हा कर दी है ।
हा भर के ऋपि ने कु वर के मन खुशियाँ भरदी है ॥५९७॥

वातो मे खोये खोये ये पता नही कव सोये ।
हुआ सवेरा नित्य कर्म से निपटे न्हाये धोये,सुनलो०॥५९८॥
ऋपभदेव जिनमदिर मे कर पूजन फूल चढाये ।
तन्मयता से प्रभु स्तवना मे गीत भक्ति के गाये,सु०॥५९९॥

राजकु वर की आखो मे से आसू वाहर आये ।
आसू चाहे जैसे हो ये जाते नही छुपाये, सुनलो०॥६००॥

ऋषि ने पूछा अब तक भी क्या दर्द हुआ ना कमती ।
पलकों से अंसुवन की धारा जो थामी ना थमती,सु०॥६०१॥
इन गीली आँखों में नहिं था घुटन तड़फ या गम ।
भक्तिभाव का सुख संवेदन कह सकते हैं हम,सुनलो०॥६०२॥
अच्छा तब तो तुम्हें शीघ्र ही होगा इच्छित लाभ ।
हो भी सकता है ऋषि मेरा होगा ब्याह सहाब, सु०॥६०३॥
भले व्यक्ति हो भले वस्तु हो, जो हो तुम्हें पसन्द ।
जिसके मिलने से मानव को मिले परम आनंद,सुनलो०॥६०४॥
प्रभु पूजन दर्शन स्तवना पर यदि आँसू बह जाए ।
इष्ट प्राप्ति के संसूचक वे ऐसा माना जाए, सुनलो०॥६०५॥
ऋषिकुमार! मुझे कुछ प्रिय हो, ऐसी बात नहीं है ।
है तो ऋषिदत्ता है केवल-वो तो गई कहीं है,सुनलो०॥६०६॥

यदि ऋषिवाणी सच है तो क्या वो ऋषि मिल जायेगी ।
मुरझाए मनवाली कलियां क्या फिर खिल पायेगी ॥६०७॥

मुख पर स्मित विस्मित नयनों से ऋषि ने उसे निहारा ।
प्रश्न उठाया गया नहीं फिर राजकुंवर के द्वारा ॥६०८॥

जुता हुआ रथ त्यार खडा था थी सेना तैयार ।
ये दोनों आरूढ़ हो गये, गूंजा जय जयकार,सुनलो०॥६०९॥

आगे सैनिक पीछे सैनिक रखते हैं रखवाली ।
मीठे फल देने लगती जब फले पुण्य की डाली, सु०॥६१०॥

रहे देर तक मौन कुवर ने पूछा प्रश्न विशेष ।
ऋषि सिर पर इल्जाम लगा क्यो दो इस पर उपदेश ।।६११।।
कृत कर्मो का करना पडता जीवो को भुगतान ।
भला बुरा फल देने वाले कर्म शुभाशुभ जान, सुनलो० ।।६१२।।
पुण्य विना सुख पाप विना दुख नही किसी ने पाया ।
कब? कैसे? क्या? किया गया यह नही समझ मे आया, सु ।६१३।
क्या यह आशय है कहने का, ऋषि ने जो दुख पाया ।
वो उसके पापो का फल था हा हा सही सुनाया, सु० ।।६१४।।
दिये विना इल्जाम न आता निश्चित है यह बात ।
केवल ज्ञानी अवधि ज्ञानी कह सकते साक्षात्, सुनलो० ।।६१५।।
जिसको इसने किया कलकित किसी जन्म मे मानो ।
उसने इसको किया कलकित सत्य तत्त्व पहचानो, सु० ।।६१६।।
उसी व्यक्ति के द्वारा आए फिर ऐसा ही आल ।
ऐसा नियम नही है निश्चित कहते दीनदयाल, सुनलो० ।।६१७।।
आल चढाने वाला मन से करे नही अनुताप ।
तो उसके सिर आल चढेगा छूटेगा तब पाप, सुनलो० ।।६१८।।
तत्त्व ज्ञान वाली ये बाते नई और मतिगम्य ।
सुनकर राजकुवर रस लेता कहता बहुत सुरम्य, सुनलो० ।६१९।
पूछा, खतम हो गया होगा इससे उसका पाप ।
हम कैसे कह सकते निश्चित ज्ञान नही जब साफ, सुनलो ।६२०।

अगर रह गया होगा बाकी तो भुगतेगी फिर से।
जन्म कहीं से जीव पाप का बोझ उतारे सिर से, सुनलो०।६२१।
ऋषिदत्ता की याद झूठी है तत्त्वज्ञान के साथ।
इसे भुलाने को ऋषिवर अब, मोड़ रहे हैं बात, सुनलो.।६२२।
उस दु:खद घटना को अपने मन से दूर निकालो।
अपने को अपने वालों को शांति सहित संभालो,सुनलो.।६२३।
खोया रहूं भले यादों में वो न मुझे मिल सकती।
पंकज छोड किसी पत्थर पर भले कली खिल सकती,सु.।६२४।
मुरझाए मन से ऐसे क्या शादी करने जाना।
मित्र ! मात्र पितृ आज्ञा का पालन करना माना,सुनलो.।६२५।
इस शादी से रूक्मरण को ही मिल सकता आनन्द।
मेरे दिल के द्वार अन्य के लिये मानलो बन्द, सुनलो०।६२६।
राजकुमार ! जरा सोचो यह द्वन्द्व भरा संसार।
शाश्वत शांति नहीं है इसमें, देखो करो विचार सुनलो०।६२७।
इसे त्यागने का करते हैं ऋषि मुनि जन उपदेश।
राजकुंवर सुन बोला सच है झूठ नहीं लवलेश,सुनलो.।६२८।
क्षणिक सुखों के प्रति इस मन की नहीं छूटती ममता।
इसीलिये पलती आई है स्थिति में बड़ी विषमता,सुनलो.।६२९।
भरी दुपहर का सूर्य चढ़ा सर समय हुआ भोजन का।
यात्रा रूकी छावनी फैली समुचित स्थल था वन का,सु.।६३०।

दोनो जीमे साथ किया फिर हल्का सा विश्राम ।
यात्रा आगे वढी वढे रथ जैसा था प्रोग्राम, सुनलो०।६३१।
ऋषि ने कहा तुम्हारे से क्यो हुआ मुझे अनुराग ।
प्रिय था मुझे आज तक केवल जो स्वीकारा त्याग,सु ।६३२।
पूर्वजन्म का अपना कोई हो सकता सबध ।
राजकवर ने कहा मानलो, इसमे ही आनद,सुनलो०।।६३३।।
तुम्हे प्यार है मेरे से भी ऋपिदत्ता से ज्यादा ।
उतना ही है जितना उससे था कहता कर वादा,सुनलो ।६३४।
तुम हो पुरुप और वह स्त्री थी इतना ही है अन्तर ।
आप मित्र हो वह थी पत्नी स्नेह वही आभ्यन्तर,सुनलो ।६३५।
नही प्रेम न किया कभी भी, लिग रग का भेद ।
देह मात्र से निकला करता साधारण प्रस्वेद,सुनलो०।६३६।
सीता से भी अधिक स्नेह था लछमन से रघुवर का ।
मृत को मृत माना तव जाना कथन सत्य है सुर का,सु ।६३७।
राजकुवर हो वडे विचक्षण रखते ऊँचा ज्ञान ।
तुमने तो दे दिया विन्दु पर सिधु सदृश व्याख्यान, सु ।६३८।
करने लगा कल्पना कुवर आने वाले कल की ।
मुझे छोड ले लेगे कल ये राह किसी जगल की,सुनलो ।६३९।
तव क्या होगा इसी दु ख से लिया दीर्घ नि श्वास ।
ऋपि वोले क्यो वने वताओ एकाएक उदास, सुनलो ।६४०।

भविष्य की कोई चिन्ता क्या सता रही है मन को ।
बीती बातों ने उद्वेलित किया कहीं जीवन को,सुनलो.।६४१।
सिर्फ भविष्य काल को चिन्ता ने ही मुझे सताया ।
राजकुंवर ने इससे आगे कुछ भी नहीं बताया,सुनलो.।६४२।
बोला ऋषि क्या जान सकू मैं बात आपके मन की ।
कहा कुंवर ने आप मात्र हो औषधि रोग शमन की,सु.।६४३।
चले नहीं जाओगे ऋषि तुम करके मेरा त्याग ।
इतना मुझे बता दो मेरी जाये उदासी भाग,सुनलो.।।६४४।।
भला तुम्हें क्यों छोड़ूंगा जब तुम्हें हो रहा दुःख ।
फिर भी निश्चित समझो अस्थिर और क्षणिक है सुख,सु.।६४५
ऋषिदत्ता को आश्रम से जब आप ले गए साथ ।
ऋषि न रहेगी तब क्या मालूम थी यह सारी बात,सु.।६४६।
चिन्तन सत्य यथार्थ आपका कौन करे इन्कार ।
सुख पीछे दुख दुख पीछे सुख सब करते स्वीकार,सु.।६४७।
कावेरी की सीमा में अब सबने किया प्रवेश ।
अभिवादन कर रहे सचिवगण जैसा नृप आदेश,सुनलो.।६४८।
कावेरी के श्वेतमहल में इन्हें गया ठहराया ।
आगत स्वागत करने को सुरसुन्दर भूपिति आया,सु.।६४९।
नृपति हेमरथ ने जो मेरी विनति की स्वीकार ।
राजकुमार पधार गये हो ब्याहने मेरे द्वार,सुनलो०।।६५०।।

राजा ने पूछा अब कहिए आप कौन ऋषिराज ।
मेरे प्यारे मित्र साथ मे लाया इनको आज, सुनलो०।६५१।

इसके लिये आपको भारी देनी होगी दाद ।
इन्हे देखकर सब मित्रो को कर सकते हो वाद,सुनलो०।६५२।

नृप ने इनके साथ बैठकर भोजन किया यही पर ।
इन्हें यहाँ पर ठहराया औरो को और कही पर सुनलो०।६५३।

कल शादी होने वाली है, राजसुता के साथ ।
ऋषिकुमार छेडता है अब एक अजब-सी बात,सुनलो०।६५४।

कभी रुक्मणी को देखा है, कहिए राजकुमार ।
'नही तो'! कैसे पूछ रहे हो प्रश्न बडा बेकार,सुनलो०।।६५५।।

तो क्या उसे बिना देखे ही, उससे व्याह करोगे ।
अगर पसद नही आई तो किसमे डूब मरोगे, सुनलो०।।६५६।।

ऋषिकुमार बोलकर ऐसा हँसा जोर से खिलखिल ।
हँसी मजाक वहाँ होती जब दिन जाता है हिलहिल,सु०।६५७।

गुप्त सूचना मिली तुम्हे यह है वो क्या विकलाँग ।
ऐसा हो तो अभी भगे हम कूदे भरे छलाग, सुनलो०।।६५८।।

हुई कलूटी काली तो क्या होगी तुम्हे पसन्द ।
प्रश्न उठाते जाते ऋषि करते ना हँसना बद, सुनलो०।६५९।

बोला राजकुमार आप कल करो क्यो न यह काम ।
महलो मे जा उसे देखलो ले भिक्षा का नाम, सुनलो०।।६६०।।

कहना उससे भिक्षा लूंगा दूंगा आशीर्वाद ।
अच्छा हुआ उपाय अनोखा मुझे आ गया याद,सुनलो०।।६६१।।
गुण पर आधारित होती है पसंदगी ऋषि-जन की ।
रूपाधारित पसंदगी होती है राजभवन की, सुनलो०।।६६२।
राजकुंवर के मुख से निकली इसी बीच में बात ।
ऋषिदत्ता में रूप और गुण खिले हुए थे साथ,सुनलो०।।६६३।।
ऋषि ने कहा रूक्मणी की मैं पढ़ता जब रामायण ।
ऋषिदत्ता के कथा भाग का करते तुम पारायण,सुनलो०।६६४।
रूप हुआ गुण नहीं हुए तो कर लोगे स्वीकार ।
गुण हो रूप नहीं हो तो क्या ब्याहने को तैयार,सुनलो०।६६५।
रथमर्दनपुर ले जाना है मुझे मात्र कर शादी ।
करो बेतुकी बातें मत हो बातों से बरबादी,सुनलो०।।६६६।।
उसे वहाँ रहने को दूंगा महल अलग से चाकर ।
मुझको उससे क्या लेना उसके जीवन में जाकर,सुनलो.।६६७।
ऋषि बोले क्या खेल रहे हो रूक्मण से यह खेल ।
उचित नहीं कहलाती शादी जो न बैठता मेल,सुनलो.।६६८।
मेरे से शादी करने की उसने क्यों जिद ठानी ।
इच्छा के विपरीत सभी की बातें मैंने मानी,सुनलो.।६६९।
ऋषि ने कहा रूक्मिणी से मिल, करो स्पष्टता सारी ।
शायद हठ दे छोड स्वयं का बच जाए वेचारी,सुनलो.।६७०।

इतना है अवकाश कहाँ जो हो ये बातें सारी ।
तो उसके प्रति तुम निष्ठुर मत बनना है वो नारी,सु ।६७१।
ऋषि रुक्मण से नही करु गा, मैं निष्ठुर व्यवहार ।
सुन पूरा सतुष्ट हो गया स्नेही ऋषि कुमार, सुनलो ।६७२।
बतियाते बतियाते सोए दोनो सच्चे साथी ।
कल शादी हो जिसकी उसको नीद आज क्या आती,सु ।६७३।
कावेरी के राजपथो को छिडका वासित जल से ।
गू ज रहा है कोना कोना शब्दो के मगल से,सुनलो ।६७४।
बाधे तोरण द्वार-द्वार पर गाये जाते गीत ।
राजमहल सज रहा अनूठा जैसी रीत पुनीत,सुनलो०।६७५।
दुल्हे दुलहन को विठलाया मडप मे ला करके ।
राजपुरोहित मत्र बोलता लय से गा गा करके,सुनलो ।६७६।
राजकवर के हाथो मे रुकमण का हाथ रखाया ।
सप्त वचन सेवधे परस्पर बधन बडा सुहाया,सुनलो०।६७७।
रथ पर बैठ साथ मे दोनो श्वेतमहल से आये ।
राजकवर ने खोजा लेकिन ऋषि न वहा मिल पाये,सु ।६७८।
कल वापिस लौटूगा कहकर गए कही वे बाहर ।
सूचित हुआ सेवको द्वारा राजकवर को आखिर,सुनलो ।६७९।
इस व्यवहार कुशलता से मन हुआ प्रभावित भारी ।
राजकवर ने सोचा ऋषि वह त्यागी मैं ससारी,सुनलो ।६८०।

फूलों की शय्या पर बैठी सिमटी रूक्मण रानी ।
बिना बुलाए कैसे बोले दुल्हन चतुर सयानी, सुनालो:।६८१।
नवपरिणीता के प्रति किंचित राग न पति के मन में ।
ऋषि के सिवा किसी को स्थान न देता है जीवन में,सु०।६६२।
देख रही वो कब देखे पति मेरी ओर नजर धर ।
देखा तो स्मित उभरा आई पति के निकट सरक कर,सु०।६८३।
पहला प्रश्न यही पूछा है रूकमण ने साहस कर ।
ऋषिदत्ता कैसी थी नागिन रही तुम्हें जो हंसकर,सु०।।६८४।।
उठा उफान उदासी का सुनली निज आँखें मूंद ।
हृदय वेदना से भर आया गिरी न आँसू बूंद,सुनलो०।।६८५।।
ऋषि की सुन्दरता का वर्णन सुनना है तो सुन ।
उस सम देखे नहीं दूसरी स्त्री में रूप सुगुण, सुनलो०।।६८६।।
स्त्रियाँ नहीं वे सभी देवियां तत्सम्मुख शरमाती ।
देवलोक में छिपी कहीं मुख न हमें बतलाती,सुनलो०।।६८७।।
मिली मुझे वह पत्नी मेरा यही बड़ा सौभाग ।
किन्तु उजाड दिया किस्मत ने मेरा जीवन बाग,सु०।।६८८।।
चली गई वह दूर यही था कुदरत को मंजूर ।
दया धर्म को छू न सके कर्मों के पुद्गल क्रूर, सुनलो०।।६८९।।
ऋषिदत्ता की याद अभी भी क्या आती है नाथ ।
दुखती रग को छू बैठी है रूकमण की यह बात, सु०।।६९०।।

खुशबू सी ज्यो छुपी हुई वह सासो की धडकन मे ।
सभव नही भूलना उसको इस या उस जीवन मे,सु०।।६६१।।

करना पडा मुझे तुझ से यह व्याह एक सयोग ।
शायद विधि ने किया नया ही मानो एक प्रयोग,सुनलो०।६६२।

मुझे चाहते आप नही क्या और न मुझ से प्रेम ।
प्रेम चाह ना वार वार करने का मुझको नेम,सुनलो०।।६६३।।

इसका अर्थ यही लू मै कुछ भी न सामने उसके ।
ऐसा कहकर उठी रुकमणी भरने बैठी डुसके,सुनलो०।।६६४।।

तेरा कुछ अस्तित्व नही है बोला राजकुमार ।
प्यार ऋषि को दिया तुझे अब दिया न जाए प्यार,सु०।६६५।

गुस्से मे होकर रुक्मण ने उगला जहर अनोखा ।
गुनहगार बन गई प्रिया वह, यही रह गया धोखा,सु०।६६६।

ढ़ाल सातवीं

दोहा

स्वार्थी नर देखे नहीं, ना सोचे परिणाम ।
रूकमण ने षड्यंत्र से, ऋषि को की बदनाम ।।

तर्ज—पावन पुरूषोत्तम

देखा होगा उसे आपने जो जोगन थी आई ।
मैंने ही भेजा था उसको रख दी आज सचाई,सुनलो०।६९७।
आप न आए जब कावेरी लौट गए उस वन से ।
मेरे लिए बनी ऋषिदत्ता बहुत बुरी दुश्मन से,सुनलो०।६९८।
सुख में रहने दूं उसको मैं हो सकता यह कैसे ।
सुलसा से संपर्क किया फिर मैंने जैसे तैसे, सुनलो०।।६९९।।
जादू टोनों में पारंगत जूनी जोगण नामी ।
ऋषि की करवा दी जाए यों पूर्णतया बदनामी,सु०।।७००।।
एक व्यक्ति की हत्या होती थी ना पुर में प्रतिदिन ।
पकड़ा गया नहीं हत्यारा,बढ़ी कठिनता छिन छिन, सु०।७०१।
मांस खंड मिलते थे ऋषि के सिरहाने के नीचे ।
चेहरा रहता सना रक्त से जोगन उसके पीछे,सुनलो०।।७०२।।
उसी तुम्हारी प्राणप्रिया पर, आया था इल्जाम ।
मेरा सुख छीना था उसने उसका यह परिणाम, सु०।।७०३।।

शय्या से उठ खडा हो गया, सुनकर राजकुमार।
रुक्मण का सिर कट जाता जो होती हाथ कटार,सु०॥७०४॥
डायन तूने खुद करवाया ऐसा पाप भयकर।
रुकमरा को शय्या से नीचे पटका वाल पकडकर,सु०॥७०५॥
सतापाकुल चल आया है शयनखड से वाहर।
हुआ खिन्न मन तन मे गुस्सा आया रुक्मण ऊपर,सु०॥७०६॥
मुझे प्राप्त करने रुक्मण ने,ऋपि को मरवा डाला।
मेरे लिये हुई यह हत्या सारा सार निकाला,सुनलो०॥७०७॥
मुझे न जीना, जीकर के भी मुझे यहाँ क्या करना।
चिता जलाकर कूद आग मे अग्निस्नान कर मरना,सु०।७०८।
अदर जाकर उसने अपना, निश्चय उसे वताया।
सुनते ही हो खडी वाहुओ को सम्मुख फैलाया,सुनलो०।७०९।
आगे वढी लिपटने को तव पति ने धक्का मारा।
छूने की कोशिप मत करना डायन कह दुत्कारा,सुनलो०।७१०।
वाहर निकल झरोखे मे आ, खडा हो गया तत्क्षण।
अरुणोदय की आभा से इत,गगन हो रहा पावन, सु०॥७११॥
राजकुमार हुए जाता है, उदासीन अत्यन्त।
कही किनारा नही दीखता,नही सूझता पथ,सुनलो०॥७१२॥
भवर फसी किश्ती के जैसी मन की बनी अवस्था।
आकुल व्याकुल अस्त व्यस्त तन की हालत हुई खस्ता सु।७१३।

रहा सांस घुट घूम रहा सिर कांप रहा है तन ।
बुला सेवकों से कहता है, सुनलो एक वचन, सुनलो०।।७१४।।
करके चिता तैयार करूंगा मै अब अग्नि स्नान ।
कहा पुनः मेरी आज्ञा पर शीघ्र दीजिये ध्यान,सुनलो०।।७१५।।

सन्न रह गए अनुचर सुनकर,बात हुई क्या आखिर ।
पुतले से हो खडे रो रहे बहते आंसू झरझर, सुनलो०।।७१६।।
रोने की आवाज श्रवण कर, दास दासियां आये ।
देख कनक को सहम गए सब,मन ही मन घबडाये,सु०।।७१७।।

ऐसा कैसे हो सकता है, छोडो गलत विचार ।
चले चलेंगे भले आज ही अपने पुर सरकार,सुनलो०।७१८।।
राजाजी को माताजी को मुंह क्या दिखलायेंगे ।
कावेरी में अग्नि स्नान कर जो यों जल जायेंगे,सुनलो०७१९।

कहीं नहीं जाना है मुझको मुश्किल मेरा जीना ।
कहते-२ राजकुंवर का कडा कलेजा भीना, सुनलो०।।७२०।।
परिचारक घबडाकर भागे नृप को सूचित करने ।
राजकुमार हो रहे उद्यत अग्निस्नान कर मरने,सुनलो०।७२१।

सुनते ही सुरसुन्दर राजा, आए भागे भागे ।
कुंवर उतरता हुआ सीढ़ियाँ मिल जाता है आगे, सु०।।७२२।।
नृप अपनी बांहों में भरकर उसे ले गये भीतर ।
क्या कारण है मरने का क्या करते त्रिया चरित्तर,सु०।७२३।

चाहे जैसा दुख हो तो भी पराक्रमी नर सहते ।
आतमघात करते न किसी को करने का भी कहते, सु०॥७२४॥
स्वस्थ बनो आगे पीछे की सोचो सारी बात ।
कहा कुवर ने बस अब जीना रहा न मेरे हाथ, सु०॥७२५॥
इस निर्णय का कारण भी अब, नही पूछिये आप ।
भरने लगा गला भूपति का रोते है चुपचाप,सुनलो०॥७२६॥
मुझे हेमरथ पूछेगे तो क्या दूगा मै उत्तर ।
मरने तो दूगा न आपको, चाहे कुछ हो आखिर, सु०।७२७।
चल ही रही बात यह सारी इतने मे ऋषि आये ।
ठिठक गए दरवाजे पर ही पाव न बढने पाये, सुनलो०।७२८।
नृप ने कहा आइए भगवन् कहा गए थे आप ।
बैठो सुनो कहानी सारी और करो इन्साफ,सुनलो०॥७२९॥
मित्र आपके क्या कहते है इन्हे जरा समझाओ ।
तुम्ही इन्हे समझा सकते हो लो अब आगे आओ,सु०॥७३०॥
ऋषि ने सकेतो से नृप को, कहा चले जाने को ।
चले गए नृप ऋषि आ बैठे इसको समझाने को,सुनलो०।७३१।
हथेलियो मे हाथ बाधकर आर्द्र स्वरो से बोले ।
सहृदय मिले पूछने वाला दुखियारा दुख खोले, सु०॥७३२॥
कहो हुआ क्या कह दो सच सच जो न छुपाने जैसा ।
एक रात मे ही पीछे से खेला नाटक कैसा, सुनलो०॥७३३॥

अनहोना हो गया सभी कुछ लाभ नहीं कहने में ।
पूछे मित्र,मित्र के हित,हित लाभ न चुप रहने में,सु०।।७३४।।
एक दूसरे के दुख को हो दोस्ती गले लगाती ।
कहने से हल्की हो जाती,भरी हुइ दुख से छाती,सुनलो०।७३५।
उत्तेजित उद्विग्नमना हो कहता राजकुमार ।
ऋषिकुमार शांति से सुनता, मैत्री का व्यवहार, सु०।।७३६।।
गुप्त भेद खुल गया रात को ऋषिदत्ता थी शुद्ध ।
जानबूझ इल्जाम लगाया रूकमण ने हो क्रुद्ध,सुनलो०।।७३७।।
सारा था षड्यंत्र इसी का इसने हो मरवाया ।
सुलसा जोगन के द्वारा सब काम बुरा करवाया, सुनलो०।७३८।
योगशक्ति का दुरुपयोग भी स्वार्थी नर कर लेते ।
उकसाने को कानों में जब लोग फूँक भर देते,सुनलो०।।७३९।।
ऐसा करके भी गौरव का अनुभव रूकमरण करती ।
साधारण आत्मा पापों से पहले पीछे डरती,सुनलो०।।७४०।।
ऋषि न रही तब मैं क्यों जोऊं फिर रूकमरण के साथ ।
इसीलिये कर अग्नि स्नान करलूं मैं आतमघात, सु०।।७४१।।
ऋषि बोले मर करके भी जनमोगे कहीं दुबारा ।
पाप पुण्य का भोग वहां पर भरना होगा सारा,सुनलो०।७४२।
भ्रमणा में मत रहना आगे तुमको ऋषि मिल जाये ।
कोई जीव कहां जाता यह हमको कौन बताये,सुनलो०।।७४३।।

आत्मघात करने वालो की दुर्गति ही होती है ।
ढोती बोझ बुरे ध्यानो का वो आत्मा रोता है,सुनलो०।।७४४।।
मिले मुझे आश्रम मे तव क्या कहकर लाये साथ ।
सोचा नही आपने वो तो करते कैसो वात, सुनलो०।।७४५।।
तुम्हे दुखी करना न चाहता किसी कृत्य के द्वारा ।
मुनिकुमार क्षमा करदो अपराध हुआ जो सारा, सु०।।७४६।।
सुनो आत्महत्या करने का छोडो वुरा विचार ।
मित्र मित्र करते आए हैं मित्राग्रह स्वीकार, सुनलो०।।७४७।।
जीवित रहने पर शायद वो मिल जाए ऋषिदत्ता ।
ऋषि! क्या? टहनी से जुड सकता पका,गिरा जो पत्ता,सु।७४८।
मृत भी क्या जीवित हो सकती मिले मुझे जो जिन्दा ।
मेरे सम्मुख ऐसी वातें मत करना आइन्दा, सुनलो०।।७४९।।
ऋषि को पुन. लौटना होगा हो जो तुममे सत्त्व ।
तत्त्व यही है सकल्पो का माना वडा महत्त्व, सुनलो०।।७५०।।
उसे कही देखा क्या जीवित समाचार या पाये ।
सत्य क्यो न वतलाया जाए क्यो कुछ भेद छुपाये,सु०।।७५१।।
ऋषिकुमार तुम्हारे पर है मुझे पूर्ण विश्वास ।
ऋषि के जीवित होने का होता है कुछ अहसास,सु०।।७५२।।
नही करू गा आत्मघात यह पहले करलो वादा ।
तव जा कोई वात करू गा,मेरा यही इरादा, सुनलो०।।७५३।।

राजकुंवर ने वचन दे दिया नहीं करूंगा हत्या ।
ऋषि बोले ऋषि जीवित है यह जाना मैंने मत्या, सु०।७५४।
क्यों न आज तक मुझे बताया है तो कहो कहां है ?
लावो उसे मुझे ले जावो अपने साथ जहां है, सु०।।७५५।।
मत टरकाओ मुझे हो रही मिलने की उतावल ।
उतावल में हो जाता है समझदार भी पागल, सु०।।७५६।।
चार दिशाओं के अधिपति सुर होते ही हैं चार ।
दक्षिण अधिपति के कब्जे में है वो सुन्दर नार, सु०।।७५७।।
कैसे उसे यहां ला सकता बडा कठिन यह काम ।
रहना होगा मुझे वहीं पर कर विस्मृत निजनाम, सु०।।७५८।।
होकर मुक्त यहां आए वो तुम्हें मिले दे प्यार ।
हो जाऊं मैं वहां समर्पित बनकर बहुत उदार, सु०।।७५९।।
ऋषिकुमार तुम्हें क्या दूं मैं दूं मैं मेरा आतम ।
भूलूंगा उपकार नहीं यह साक्षी है परमातम, सु०।।७६०।।
रहो तुम्हारे पास तुम्हारी आत्मा तुम्हें मुबारक ।
बात एक मानोगे मेरी,मानो जो उपकारक, सु०।।७६१।।
एक नहीं सारी ही बातें मानूंगा तन मन से ।
अच्छा इसके लिये अभी से बंधते हो न वचन से,सु०।।७६२।।
सुखी रहो हो कुशल तुम्हारा ऋषि तुमको मिल जाये ।
ऐसे कहकर चले कुंवर ने मन ही मन गुण गाये,सु०।।७६३।।

ऋषि के भव्य समर्पण का मन धन्यवाद है करता ।
मित्र मित्र के लिये मरेगा,शत्रु कभी ना मरता, सु०॥७६४॥

बात असभव सभव होगी, ऋषि आ मुझे मिलेगी ।
जड से उखडी हुई कली फिर अपने स्थान खिलेगी,सु०।७६५।

अनहोनी आकाक्षाओ मे लेते सास उफान ।
अणु अणु मे बस मचा हुआ हे एक बडा तूफान, सु०॥७६६॥

इन्तजार वाली घडिया में जो होता आनद ।
वो अस्सीम अनत उसे क्या बाध सकेगा छन्द, सु०॥७६७॥

रोया रोया महक उठा ज्यो महके रजनीगधा ।
गोरखनाथ सिवा क्या जाने मन का गोरखधधा,सु०॥७६८॥

पिघल गया परिताप स्थान ले रहा नया परितोप ।
दुख मे बैचेनी होती सुख मे होता सतोष, सु०॥७६९॥

सजकर आने लगी बदलियाँ प्यारे नील गगन पर ।
प्यारी ज्यो शृ गार बनाती, प्यारे छगन मगन पर,सु०।७७०।

टोह मोरनी की करता है मोर मचाकर शोर ।
मोहोदय से बन जाता है सबका मन कमजोर, सु०॥७७१॥

बहुत दिनो के बाद भले हो होता मिलन मधुर ही ।
सुख उपजाया करती है वो आने की सुर-सुरही,सु०॥७७२॥

शुक से सटकर बैठ सारिका दिखा रही है प्यार ।
मिलन भावना को देते है मानो नव्याकार, सु० ॥७७३॥

दीवारों पर चित्रित चित्रों में आई है जान ।
नया खिचाव कर रहे पैदा, राजकंवर के प्राण, सु०।।७७४।।
ऋषिदत्ता आ खड़ी सामने सपना नहीं यथार्थ ।
व्याख्या सहित समझ में आया शब्दों का भावार्थ,सु०।७७५।

फैल उठे हैं बाहु पांव-लडखडा गए तत्काल ।
झुक कर किया प्रणाम उसी ने अपने को संभाल, सु०।७७६।
नहीं भ्रमणा है सत्य ऋषि कर लिया गया है निर्णय ।
यह बोले उससे पहले हो बोल उठी वो सविनय, सु०।।७७७।।

आप कुशल हैं सुन बोला वह धन्य हुआ मम जीवन ।
दूर हो गया तुम्हें देखकर तन मन का सूनापन, सु०।।७७८।।
मौनावरण लपेटे ऋषि को साथ ले गया ऊपर ।
फूल बरसने लगे गगन से, ध्वनि आती मीठे स्वर,सु०।७७९।

'महासती ऋषिदत्ता जयतु' प्रगट देवता कहते ।
सुन सुरसुन्दर दौडे आए कैसे पीछे रहते, सु०।।७८०।।

लोग बावले बने देखने सुनकर चर्चा सारी ।
ऋषि ऐसी कैसी है सुन्दर विधि ने स्वयं संवारी,सु०।।७८१।।
नृप ने कहा गजारूढ़ हो चलो महल में आप ।
शोभायात्रा में जनता कर लेगी दर्शन साफ, सु०।।७८२।।

राजकुमार और ऋषि बैठे बैठे भूपति साथ ।
मौन मधुरता मर्यादा की सभी मानते बात, सु०।।७८३।।

एक वार उठ उठी न फिर से ऋपि की पलकें भारी।
लज्जाशीला होती ही है शीलवती सन्नारी, सु०॥७८४॥
जीभर दर्शन किए सभी ने खुश मन से गुन गायें।
भोजन के पश्चात् मत्रणा-गृह मे नृप ले आये, सु० ॥७८५॥
ऋपि रानी के साथ ले रही, वातो का आनद।
राजा राजकुँवर आ वैठे, अलग रूम मे वन्द, सु०॥७८६॥
अच्छा किया आपने अपना निर्णय वापिस लेकर।
ऋपि को पा सकते न कभी भी प्राणाहुति यो देकर, सु०।७८७।
करना पडा किसलिये ऐसा वतलादो ना आप।
अन्न त्याग रो रही रूकमणी कुछ न वोलती साफ, सु०।७८८।
रोना वद किया उसने अव समाचार शुभ पाकर।
संभव है वो मर भी जाती फासी या विप खाकर, सु०।७८९।
आद्योपात सुनाओ हमको वो सारा वृत्तांत।
जिससे वन पाए ये मेरा भ्रान्त चित्त भी शात, सु०॥७९०॥
राजकवर वोला न पूछिए अग्निस्नान का कारण।
सुख के वदले दुख ही होगा मौन कीजिए धारण, सु०॥७९१॥
यद्यपि नही पूछना अच्छा पूछ रहा हू फिर भी।
शायद उपयोगी हो जाए प्रश्नावलि आखिर की, सु०॥७९२॥
यथार्थता का वोध कराना जाए वुरा न माना।
राजकवर ने मान लिया है कारण सही सुनाना, सु०॥७९३॥

मुझे वचन दे आप जानकर कर परिस्थिति पर गौर।
देंगे नहीं रूकमणी को कुछ कोई दंड कठोर. सु०॥७९४॥

नृप ने कहा रूकमणी पर अब है अधिकार तुम्हारा।
नहीं करूंगा सजा उसे मैं मेरे निर्णय द्वारा, सु० ॥७९५॥

पहले से ले अब तक की सब घटना लगा सुनाने।
सुन सुरसुन्दर लगा कांपने खुद का सिर खुजलाने,सु०।७९६।

ऐसा अधम घिनौना कारज रूकमरण ने करवाया।
सुलसा द्वारा ऋषि के सिर पर ऐसा आल चढ़ाया,सु०॥७९७॥

गुस्से में हो खडे बढ़े लेने के लिए कटार।
नृप को जकड़ बाहुओं में यों बोला राजकुमार, सु०॥७९८॥

मुझे न ऐसी सुता चाहिए छोडो राजकुमार।
सुलसा जोगन सहित भेज दूं यमराजा के द्वार, सु०॥७९९॥

मुझे वचन दे रखा आपने कुछ भी दंड न दूंगा।
करो माफ अपराध यही मैं कहता और कहूंगा, सु०।८००।

नृप ने आज्ञा दी दासी को ले आजा रूकमरण को।
और बाद में बुलवाऊँगा, उस दुष्टा जोगरण को,सु०।८०१।

ऋषि को लेकर श्वेतमहल में कहा कुंवर ने जाऊँ।
बैठो यहीं आपके सम्मुख रूकमरण से हुं कराऊँ, सु०॥८०२॥

रूकमरण आई मिला न पाई पति से नजर परस्पर।
पितृचरण में प्रणमन करके बैठी बहुत सिमट कर,सु०।८०३।

वेटी वता जानती है क्या तू मुलसा जोगन को।
और अभी वह कहाँ मिलेगी देखे उस पापन को,सु०।८०४।

अता-पता सव वता दिया हे रुकमण ने नरवर से।
सेनापति को वुलवाया है भेज गुप्तचर नर से, सु०॥८०५॥

खडी रुकमणी काप रही है अपने मन के भीतर।
तीखे और कठोर वचन से वोला नृप सुरसुन्दर, सु०॥८०६॥

कुल को किया कलकित तू ने मा की कोख लजाई।
की वरवाद जिदगी खुद की कुमति तुझे क्या आई,सु०।८०७।

ऋषि भी राजकुमारी ही थी तेरे जैसी प्यारी।
नारी होकर तू नारी की वन वैठी हत्यारी, सु०॥८०८॥

उस पति को पाने को तूने कितना जाल बिछाया।
तेरा मुँह देखना उसको जरा पसद न आया, सु०॥८०९॥

उसकी ऋषि मिल गई उसे क्या होगा तेरा हाल।
घुटनभरे जीवन को कैसे पायेगी सभाल, सु०॥८१०॥

मैं वध गया वचन से तुझको सजा नही दे पाता।
सुनती रुकमन खडी खडी नृप और वोलता जाता,सु०।८११।

आँखें लाल हुई राजा की कहे क्रोध मे भरकर।
क्रोध और मेघा सावन के वरसे सदा गरज कर,सु०॥८१२॥

दासी ने आ कहा आ गए सेनापतिजी वाहर।
अगर आपकी आज्ञा हो तो मैं आने दू अन्दर,सु०॥८१३॥

कुछ हो स्वस्थ कहा राजा ने हाँ वे आ सकते हैं।
आकर नमकर भद्रासन पर बैठ गए झुकते हैं,सुनलो०।।८१४।।
सेनापतिजी अपने पुर में रहती सुलसा जोगन।
उसे पकडना होगा है वह बहुत बडी अपराधन,सुनलो०।८१५।
नाक काटकर कान काटकर गदहे पर बिठलाकर।
पुर में उसे घुमाकर करना राज्य परिधि से बाहर, सु०।८१६।
सेनापति ने नृप आज्ञा को अपने शीश चढ़ाया।
करके नमन काम करने को आगे कदम बढ़ाया, सु०।।८१७।।
श्वास वहीं का वहीं गया रुक रूकमरा का भी भय से।
विभक्तियाँ रूक जाती है जब काम पडे अव्यय से,सु०।।८१८।।
नृपनयनों से क्रोध वह्नि का निकल रहा है धूआं।
कहा सुता से गिरी स्वयं तू खोदा गहरा कूआं,सुनलो०।८१६।
दोष कनकरथ का न जरा भी, सारा तेरा दोष।
अपने भाग्य सहारे पर कर जीवनभर अफसोस, सु०।।८२०।।
नैन पोंछती हुई रूकमरणी त्वरित वहां से चलदी।
राजकुंवर की ओर मुडा है राजा जल्दी जल्दी,सु०।।८२१।।
ऋषि के पूज्य पिताजी से था मेरा प्रिय संबंध।
ऋषि भी मेरे लिये सुता है यही मुझे आनंद, सुनलो०।।८२२।।
कावेरी का राज्य तुम्हारा घूमो फिरो कहीं पर।
चित्त विरक्त हुए जाता है, मुझे नहीं रूचता घर,सु०८२३।।

पूज्य पिता के तुल्य आप हो, हुकम आपका माना ।
विनति मानिए एक आप भी राज्य छोड मत जाना,सु०।८२४।

बेटी ने जो भी भूलें की उन्हें भूलिए आप ।
भूलें होती है मानव से बात सुनो है साफ, सु०।।८२५।।

याद करोगे उन सबको तो होगा बहुत विषाद ।
दिल पर भार बना रहने से दिल होता बरबाद,सु०।।८२६।।

आज्ञा लेकर राजकुवर उठ ऋषि को लेकर आया ।
श्वेतमहल को जले हुए दीपों से द्योतित पाया, सु०।८२७।

ढ़ाल आठवीं

दोहा

अपनों से ही होत है, दिल की पूरी बात ।
नैन मूंद ऋषि कह रही, बहता नीर प्रपात ।।

तर्ज—पावन पुरूषोत्तम

उफन रही अन्दर उत्सुकता ऋषि से मांगू उत्तर ।
देखा करते प्रेम प्रश्न भी अपना अपना अवसर,सुनलो०।८२८।
शयनकक्ष में स्वस्थ मना हो ऋषि से किया सवाल ।
जीवित कैसे रही कहो तुम और रहा क्या हाल,सुनलो०।८२९।
करवट के बल शय्या पर लेटा है राजकुमार ।
नीचे बैठी ऋषि ने देखा ऊपर आंख उठाकर,सुनलो०।।८३०।।
प्रिय यह बात बहुत लंबी है, बैठूं अगर सुनाने ।
रात बीत जायेगी निंदिया नहीं सकेगी आने,सुनलो०।।८३१।।
नींद नहीं आ रही मुझे तो, है सुनने का चाव ।
कहना शुरू करो जीवन का कम हो जाय तनाव,सु०।।८३२।।
ऋषि ने कहना शुरू किया है जीवन का वृत्तांत ।
आप जानते उससे आगे सुनो बनो मत भ्रांत, सुनलो०।८३३।
काला मुंह पग नीले करके गदहे पर बिठलाया ।
कृत्य सुनाते हुए शहर में अच्छी तरह घुमाया, सु०।।८३४।।

खडा किया शमसान स्थान मैं बोला यो जल्लाद ।
अपने इष्टदेव को करले, जो करना हो याद, सुनलो०।८३५।
घूम गई तलवार गगन मे मुझे रहा ना होश ।
उसी वक्त गिर गई वही पर कृत कर्मो का दोप, सु०।८३६।

बहुत देर के बाद उठी तो दिखा न कोई भी नर ।
चले गए जल्लाद वहाँ से, मर गई मुझे समझकर सु०।८३७।
वन की ओर भगी मै अपनी सारी शक्ति लगाकर ।
कोई पकड नही ले वापिस फिर पीछे से आकर, सु०।८३८।

नीचे ऊपर इधर उधर क्या, है क्या होने वाला ।
देखा नही, रूकी थकने पर देख निराला नाला सु०।।८३६।।
पैरो से लोही रिसता है काटे गडे पडे हे ।
फटी झाडियो से जो साडी, दिखते छेद बडे हे, सु०।।८४०।।

भय सताप वेदनाओ ने, मुझ पर घेरा डाला ।
मैं क्या जानू ये क्या होते पडा न जिनसे पाला, सु०।८४१।
स्मृति स्वर्गस्थ पिता की आई रोई फफक फफक कर ।
वन को जला रहा दावानल मानो धधक धधक कर सु०।८४२।

मैंने दी आवाज पिताजो, आओ मुझे बचाओ ।
मै अब कही नही जाऊगी मेरा दु ख मिटाओ सुनलो०।८४३।
मै थी बडी लाडली मुझको करते कितना प्यार ।
आप जहा भी होवो सुन लो मेरी करुण पुकार, सु० ।८४४।

मरने दिया आपको मैंने मैं हूं बडी अभागिन ।
मर जाती मैं साथ देखने पडते मुझे न ये दिन, सु०।८४५।
जाऊं कहाँ करूं अब मैं क्या रास्ता मुझे बताओ ।
मेरी रक्षा जहां हो सके मुझे वही पहुंचाओ, सु०।।८४६।।

डूब गई इस चिन्तन में तब मिला मुझे आभास ।
ऋषभदेव की छाया में जा होगा प्राप्त प्रकाश, सु०।।८४७।।
उस आश्रम में पहुंच गई मैं प्रभु के दर्शन पाये ।
और अतीत समय के सारे दृश्य स्मरण हो आये,सु०।८४८।

ढ़ांढ़स मुझे बंधाये ऐसा कोई नजर न आया ।
फिर भी मैंने वहुत सुरक्षित स्वच्छ स्थान को पाया सु।८४९।

रहते थे राजर्षि उसी कुटिया को पौंछा झाडा ।
व्याघ्र चर्म भी वहीं पडा था नहीं किसी ने जाडा सु०।९५०।

जा तालाब किनारे पर कर लिया शांति से स्नान ।
फलाहार कर लेट गई धर श्री जिनवर का ध्यान सु०।८५१।
हुआ सवेरा उठकर लाई चुनकर फूल मनोहर ।
प्रभु की पूजा कर स्तुति बोलो शान्त भाव भर मृदुस्वर।८५२।
वन में यहां अकेली ही हूं मन में उठा विचार ।
शील रतन कोई न लूंट ले लुच्चों का सरदार, सु०।।८५३।

पूज्य पिता को कही हुई वो औषधि आई याद ।
सिर्फ कान में रखने से स्त्री बने पुरुष साह्लाद सु०।।८५४।।

दे निकाल तो स्त्री हो जाए, वह औषधि ले आऊ ।
हो जाऊ निश्चित सर्वथा सुख से शील बचाऊ सु०॥८५५॥
कुछ मेहनत के बाद लगी वह औषधि मेरे हाथ ।
स्त्री से नर बन चुकी नाथ! मै सही सुनाती बात, सु०।८५६।
रथमर्दनपुर के युवराजा उस आश्रम मे आये ।
उनने मुझको मैंने उनको देखा नैन बिछाये, सु०।८५७।
ऋषिकुमार वो तू ही खुद यों बोला राजकुमार ।
ऋषिदत्ता हँस पडी जोर से हा मेरे सरकार, सु०॥८५८॥
दोनो निद्राधीन हो गए सुनाकर कथा सुनाकर ।
तट से टकराकर क्या शात न बन जाता रतनाकर,सु०।८५९।
तन से सुखी सुखी है मन से और सुखी जीवन से ।
सुखी वही है जो सुख माने सजग विवेकी मन से सु०।८६०।
ऋषिकुमार ऋषि ही थी यह भेद सामने आया ।
आनदित मन हुआ हो गई पुलकित कचन काया सु० ।८६१।
कितने कष्ट उठाये ऋषि ने सुनकर दु ख भर आया ।
पितृ चरण जिनशरण ग्रहणकर अपना शील बचाया,सु०।८६२
मेरे को भी बचा लिया मै मरने को जाता था ।
किसका कहा करु कैसे भी समझ नही पाता था, सु०।८६३।
ऋषिकुमार नही मिलता तो ऋषि न मुझे मिल पाती ।
मिलने की आकाक्षा इह पर भव मे नित तडफाती,सु०।८६४

दोनों बैठे हुए परस्पर कथा व्यथा की कहते ।
संयोगों के वश संसारी जीव नहीं क्या सहते, सु० ॥८६५॥
ऋषि ने कहा याद है ना जो ऋषि को वचन दिया था ।
हाँ हाँ इच्छित देने का वादा उस समय किया था, सु०।८६६।
जो कुछ तुम्हें चाहिये बोलो काम नहीं है शक का ।
पालन करें अपन दोनों ही अपने-२ हक का, सु०॥८६७॥
प्यार रुकमणी को दे उतना जितना मुझको देते ।
बहुत हर्ष होगा मेरे मन बस इतना सा लेते, सु०॥८६८॥
लगा सोचने राजकुंवर है इसमें क्या गहराई ।
रूकमण के प्रति प्रेम दया यह ऋषि को कैसे आई सु०।८६९।
ऋषि ! तू यह क्या मांग रही है, है ना तुझको होश ।
रुकमण में तो अनगिनती के भरे हुए है दोष, सु० ॥८७०॥
प्यार आपका पाने का जितना मेरा अधिकार ।
उतना ही बस उसे मिले यह आप करो स्वीकार सु०।८७१।
उसका मुँह न देखना उसके लिए न दिल में स्थान ।
उससे मैं नफरत करता हूँ कैसे दूं सम्मान, सु०॥८७२॥
घृणा दूर करनी ही होगी देना होगा प्यार ।
आप प्यार के सागर होजी देखो करो विचार, सु०।८७३।
क्रोध आपका हो जायेगा क्षण में पानी पानी ।
अडना लडना करते रहते, अज्ञानी अभिमानी सु०॥८७४॥
पापोदय से बुरे कर्म कर लेता है हर कोई ।
मिलती क्या न वस्तुएं वापिस, गई कहीं जो खोई,सु०।८७५।

ऋपि तू भावुकता मे वहती हुई जा रही पागल ।
उसके भीतर सुलग रहा हे ईर्प्या का दावानल सु०॥८७६॥
तुझे मौत के मुह मे डाला रच करके पडयत्र ।
उसे यही पर जोने दो रहने दो सदा स्वतत्र, सु०॥८७६॥
तू वच गयी रह गई जीवित मुझे मिल गई श्राकर ।
तेरी मेरी किस्मत थी यह कहता सत्य घुमाकर, सु०॥८७८॥
होगी उसमे ईर्ष्या यह तो स्त्री का सहज स्वभाव ।
उसमे परिवर्तन आयेगा पाकर प्रेम प्रभाव, सु०॥८७६॥
ऋपि तू जितना समझ रही है उतनी सरल न है वो ।
एक-एक को तीन वताती वो न मानती हे दो, सु०॥८८०॥
सुलसा को जो सजा हुई है मेरे ही कहने से ।
मेरे पर गुस्से वो होगी दूर रही सहने से, सु०॥८८१॥
अगर श्राप पर क्रोध नही हो हो मन पश्चाताप ।
प्रेम श्रापका माग रही हो तो क्या करते श्राप, सु०॥८८२॥
ऋपि तू भोली समझ रही हे सवको खुद के जैसा ।
लेकिन खरा खरा होता है खोटा खोटा पैसा, सु०॥८८३॥
करुणा पात्र नही होती है दुनिया की हर श्रात्मा ।
नही महात्मा मे तुल पाती भटकी हुई दुरात्मा, सु०॥८८४॥
दयापात्र हे प्रेमपात्र है उसे क्षमा दे आप ।
पापी से पापी मानव भी करता नित्य न पाप, सु०॥८८५॥

उसने कब माफी मांगो जो उसे क्षमा दी जाये।
वो तो तेरे पर मेरे पर उल्टा जोश दिखाये, सु०॥८८६॥

कुरेदिए मत घाव पुराने जो बीता सो बीता।
हारा कौन कौन फिर जीता है यह एक फजीता सु०॥८८७॥

नरम हो गया होगा अब दिल मुझसे प्यार करेगी।
लिये प्यार के दुनिया मरती वो क्यों नहीं मरेगी सु०।८८८।

मिल तू उससे मनोभावना ले तू उसकी जान।
फिर तू चाहेगी वैसा ही होगा मुझे प्रमाण, सु०॥८८९॥

ऋषि अब तो खुश है ना बतला, तूं जीती मैं हारा।
प्यारा मुझे वही होगा जो तुझे लगेगा प्यारा, सु०॥८९०॥

ऋषि ने कहा एकदम खुश हूं प्रिय तुम बने उदार।
उदारता के मिलते हैं ये जन्मान्तर संस्कार, सु०॥८९१॥

कल उससे मिलने जाऊंगी लाऊंगी सदेश।
उपजाऊंगी उसे समाधि शेष रहे ना क्लेश, सु०॥८९२॥

ऋषि को भोली भावुकता पर खुश है राजकुमार।
मान बडाई ईर्ष्या इस पर, कर पाई न प्रहार, सु०॥८९३॥

प्रातः उठ ऋषि रथ पर चढ़कर राजमहल चल आई।
नृप से पूछ मिली रूकमण से दशा देख पछताई सु०॥८९४॥

मुख मुरझाया मैले कपड़े पहना कोई न गहना।
आंखे सूजी मन है सूना मुख से शब्द न कहना, सु०॥८९५॥

उमे देखने का यह पहला अवसर ऋषि ने पाया।
इससे पहले उससे सम्मुख ऋषि का मुख ना आया सु०।८९६।
ऋषिदत्ता ये मिलने आई रुकमण ने जब जाना।
खडी हुई लेटी चरणो मे मुह क्या इसे दिखाना, सु०।८९७।
ऋषि ने उसे बाहुओ मे भर उठा लिया है ऊपर।
रुकमण के आँसू गिरते ज्यो गिरता गिरि से निर्झर,सु०।८९८।
ऋषि बोली मत रो मत रो कुछ लाभ नही रोने मे।
लाभ तुझे होने वाला हे गरल नरम होने मे, सु०।।८९९।।
चलते चलते लग जाती है कभी कही पर ठोकर।
चलता क्या न दुबारा वो नर सावधान मन होकर,सु।९००।
हर जीवो के सिर पर कितना हे कर्मो का बोझ।
कितनी कितनी बाधाओ से गुजर रहे है हर रोज, सु०।९०१।
विषय वासनाऐ जहरीली भरी हुई है मन मे।
असावधानी बरती जाती इसीलिये जीवन मे, सु०।।९०२।।
सभल गई तू बडी सयानी करदे रोना बद।
मेरा कहना मान ध्यान से मिलकर ले आनन्द सु०।।९०३।।
मै अपराधिन मै हत्यारिन, मै पापिन मै डायन।
मुझसे मिलने को क्यो आई तुम हो भगिनी पावन सु०।९०४।
तुम देवी मै हू राक्षसणी कह करके रोती है।
ऐसी ही हालत होती है जब गलती होती है सु०।।९०५।।

मुझे न देवी कह तूं मैं भी तेरे जैसी नारी ।
मैंने दे दी क्षमा कभी की तूं है भगिनी प्यारी, सु०।६०६।

चाह रही मैं तू स्वामी से मांगे माफी मन से ।
माफ करेंगे वे तेरे को मैं कहती हूं प्रण से, सु०।।६०७।।

मैं अधमाधम कैसे जाऊं, अपना मुंह दिखलाऊं ।
ऋषि ने कहा सत्य है सब कुछ ले विधि मैं सिखलाऊं,सु०।६०८।

तू चल मेरे साथ समर्पण कर पति के पांवों में ।
जी भर प्यार करेंगे वे भी भरकर निज बांहों में, सु०।।६०६।

प्यार स्नेह पाने की मैंने लायकात खो डाली ।
मेरे से तो अच्छी है वो जहरभरी कोई प्याली, सु०।।६१०।।

जा तू उनसे कह देना है उनका मुझे सहारा ।
उन्हें याद कर कर काटूंगी, मेरा जीवन सारा, सु०।।९११।।

चल पगली हो खडी बदल ये कपडे कर श्रृंगार ।
मैं लेने को ही आई हूं झटपट हो तैयार, सु०।।६१२।।

देवी नहीं महादेवी है सचमुच में ऋषिदत्ता ।
मानूं इसका कहना कैसे टालूं ये अलबत्ता, सु०।।६१३।।

ऋषि के कहने से रूकमण ने सजे सद्य श्रृंगार ।
राजारानी भी इतने में सहसा गए पधार, सु० ।।६१४।।

ऋषि को रूकमण को देते हैं दोनों आशीर्वाद ।
आशीर्वादों का होता है अमृत सा आस्वाद, सु०।।६१५।।

ऋषि[1] रुकमण को तुझे सोपती, ऐसी वोली माता ।
नृप बोला आभार मानना वेटी मुझे न आता, सु०॥६१६॥

हम दोनो के सिर से तूने भारी वोझ उतारा ।
सवको शांति मिलेगी इसका, श्रेय तुझे हे सारा, सु०॥६१७॥

वडे उदार हृदय है स्वामी, उनमे नही दुराव ।
हम दोनो के साथ करेंगे, प्रेम भरा वरताव, सु०॥६१८॥

रुकमरण को लेने मे आई, मान वहन इक छोटी ।
कोई खोटी कहे उसे मैं, मारू कसकर सोटी । सु०॥६१६॥

रथ मे साथ विठा रुकमरण को, महलो में ऋषि आई ।
ऋषि के सरल चित्त की गुरण गाथा रुकमण ने गाई, सु०।६२०।

साथ भले के भला करे नर ऐसे वहुत मले हैं ।
साथ वुरे के भला करे नर ऐसे कम निकले है, सु०॥६२१॥
ऋषि का यही वडप्पन है जो भला किया रुकमण का ।
धर्मराज ने वुरा न चाहा दुर्मन दुर्योधन का, सु०॥६२२॥
शयनखड मैं खडा कर दिया रुकमण को लाकर के ।
पति से कहा उसे ले आई आप मिलो जाकर के,सु०॥६२३॥
ऋषि के साथ साथ चल आये शयनखड मे स्वामी ।
रुकमण झुकी गिरी चरणो मे मानो अपनो खामी,सु०।६२४।
ऋषि ने वचन ले लिया मुझसे दू गा तुझको प्यार ।
तेरे पर जो भी गुस्सा था उसको दिया उतार, सु०॥६२५॥

चली गई ऋषि इन्हें मिलाकर बैठे दो के दो ही ।
प्यार नहीं हो पाता आवे अगर तीसरा कोई, सु०॥६२६॥
घृणा पाप विष निकल गया है पति के मन से सारा ।
रूकमरण प्यारी बनी पलक में आत्मसमर्पण द्वारा,सु०॥६२७॥
अपना और पराया है यह भेद स्वयं करता है ।
अपने आप स्वयं जीता नर और स्वयं मरता है, सु०॥६२८॥
घुलना मिलना मिश्री जैसे जिस किस को भी आता ।
उसके लिए कहीं भी जावो, मिलता खुल्ला खाता,सु०॥६२९॥
ऋषिदत्ता का रूकमरण से है स्नेहपूर्ण व्यवहार ।
रूकमण की सब झिझक गई मिट,मिला प्यार ही प्यार,।६३०।
प्यार और परमात्मा में क्या, अंतर मिला कहीं पर ।
प्यार करो तो परमात्मा है, हाजर सदा यहीं पर, सु०॥६३१॥
वह क्या प्यार सार समझेगा, जिसके मन में खार ।
उसको मीठा कभी न लगता, मधुर-मधुर संसार,सु०॥६३२॥
ऋषि पति से कहती रहती थी,रूकमण है गुणवाली ।
मनभावन वह रूप न भाता जो हो मन से काली,सु०॥६३३॥
पिछली स्मृतियां हो जाने पर रूकमरण कुछ दुख पाती ।
तब सहलाती पीठ हाथ से ऋषि ढाढस बंधवाती,सु०॥६३४॥
बीती बातें याद नहीं कर, नैंन न भर पानी से ।
होती आई भूल सदा से जीवित हर प्राणी से, सु०॥६३५॥

हसी खुशी से कावेरी मे वीत गया कुछ काल।
ऋपि ने पति से कहा एक दिन सुनिये परम कृपाल,सु०।६३६।
अव रथमर्दन नगर चले मा करती होगी याद।
हमे देख सुन वो पायेगी परम शाति आल्हाद, सु०।।६३७।।
कल ही चल देते हैं ऐसे वोला राजकुमार।
करवाता हू अभी सूचना राजा के दरवार, सु०।।६३८।।
रथ मे वैठ गया महलो मे, नृप को किया प्रणाम।
घर की ओर हमे जाना कल, वना लिया प्रोग्राम,सु०।६३९।
जितना आप रुको उसमे है प्रसन्नता अति भारी।
अगर आपको जाना है तो, करवा दू तैयारी, सु०।।६४०।।
महलो मे भी खवर करा दी ये सव कल जायेंगे।
रानी सुन वोली ये पूछो, वापिस कव आयेंगे, सु०।।६४१।।
ऋपि के पति के सम्मुख देती,रुकमरण को मा सीख,
ससुराल मे शोभा लेना, रहना विल्कुल ठीक, सु०।।६४२।।
पति से पीछे सोना। पहले जगना रखना ध्यान।
सासु और ससुर का करना,विनय तथा सम्मान,सु०।।६४३।।
महलवासियो दासदासियो, पर नित दया दिखाना।
पीहर नही वही होता है, स्त्री के लिये ठिकाना,सु०।।६४४।।
ऋषि ! तू भी है वेटी मेरी, रखना इसका ध्यान।
तूं है वडी और यह छोटी, और बुद्धि नादान, सु०।।६४५।।

ऋषि की बडी प्रशंसा करते, आकर नृप सुर सुन्दर ।
घी न छुपा रहता खिचडी में, भले पडा हो अन्दर,सु०।६४६।

ऋषि बोली मेरे में ऐसी, नहीं योग्यता दिखती ।
हम दोनो बहने आपस में स्नेहभाव पर टिकती, सु०।।६४७।।

दिया आपने स्नेह मुझे जो, उसका पार नहीं है ।
भुलूंगी न कभी उसको मैं, सार विचार यही है,सु०।।६४८।।

हुई भूल हो गया कहीं पर, अविनय मेरे द्वारा ।
क्षमा मांगती जाते जाते, माफ करें वो सारा, सु०।।६५६।।

सबकी आंखें गीली है अरू, भारी है आवाज ।
इस पर से हम कर सकते हैं,दुख का कुछ अन्दाज,सु०।६५०।

कर प्रणाम महलों से निकले, श्वेतमहल चल आये ।
आये प्रमुख नागरिक मिलने,स्नेह क्यों न दिखलाये,सु०।।६५१।

ऋषि रूकमण घिर गई स्त्रियों से,जाती हो हां जाओ ।
हमें भूल मत जाना फिर कब आओगी बतलाओ,सु०।।९५२।।

राजकुंवर की आंखों आगे, खडी हुई आ माता ।
मानो माता को कहता है आता हूं मैं आता,सु०।।६५३।।

ऋषि को जीवित जान सभी को,उपजेगा मन विस्मय ।
रूकमण का यदि नाम आ गया,तो क्या होगा है भय,सु०।६५४।

महलवासियों की नजरों से, रूकमण गिर जायेगी ।
हीन भावनाओं के सम्मुख, क्या स्थिर रह पायेगी,सु०।९५५।

नाम रुकमणी का न कही पर, लिया जाय तो ठीक ।
वात एक सो हो तीनो की, ले पहले हम सीख, सु०॥६५६॥
डूवा हुआ विचारो मे यो, करवट वदल रहा है ।
इतने मे ऋषि ने आकर के, ऐसा वचन कहा है, सु०॥६५७॥
कैसे छाइ हुई दीखती, मुख पर वडी उदासी ।
रहना यही चाहते हो क्या, वन श्वसुरालयवासी, सु०॥६५८॥
परामर्श तेरे से करना, वोला राजकुमार ।
घर जाकर के कैसे कहना, पहले करे विचार, सु०॥६५६॥
वात सुनाये विना न सावित, होगी तू निर्दोप ।
नाम रुकमणी का न कही, आ जाये यह अफसोस, सु०।६६०।
अगर अकेली जोगन पर ही, डालें सारा दोप ।
उसको ऐसा करने मे क्यो, मिला कहो सतोप, सु०॥६६१॥
रुकमण की वो परम सखी थी इसीलिये कर पाई ।
वाधक बनने वाली ऋषि को यो दोपण ठहराई, सु०॥६६२॥
अरि को मारे काम पडे तो, अपने प्राण उवारे, ।
सखी सखी को सुख पहुचाये, वाधा विध्वन निवारे, सु०॥६६३॥
जोगन ने कावेरी जाकर, रुकमण से वतलाया ।
ठिठक गई वह सुनकर किस्सा, गुस्सा भारी आया, सु०॥६६४॥
शादी के पश्चात् रुकमणी, ने यह वात वताई ।
मैंने कही नृपति से उनने, उसकी करी पिटाई, सु०॥६६५॥

देशनिकाला उसे दे दिया, कहना यही बराबर ।
राजकुमार और ऋषि ने मिल,निर्णय लिया परस्पर,सु०।६६६।

पूज्य पिताजी जब जानेंगे, ऋषिदत्ता निर्दोष ।
तब उनको अपने में होगा,बहुत बहुत अफसोस, सु०।।६६७।।

दुःख व्यक्त जब करे पिताजी, रखना हमको ध्यान ।
रुकमरण अपने मुंह से सच-सच, दे दे नहीं बयान,सु०।६६८।

ढ़ाल नवमीं

दोहा

घर जाने की बात से, छाया दिल मे हर्ष ।
मन हर्षित हो जायगा, माता के कर दर्श ।।

तर्ज—पावन पुरुषोत्तम

ऋषि बोली मैं समझा दूंगी, रुकमण को सब बात ।
कभी कभी रहता न देखलो, अपना दिल ही हाथ,सु०।६६६।
इतने मे आ गई रुकमणी, बैठ गई है पास ।
इसके आने से तीनो को, हुआ परम उल्लास,सुनलो०।।९७०।।
रथमर्दनपुर देखेगी तू, रूकमण पहली बार ।
हा हा उससे पहले आश्रम, देखूगी धर प्यार, सु०।।६७१।।
जिस आश्रम मे आप पली हो, है वह भूमि पवित्र ।
उसकी धूल सुगधित होगी, जैसे बढिया इत्र, सु०।।९७२।।
ऋषि बोली उस आश्रम मे है, ऋषभदेव का मदिर ।
दर्शन कर तूं झूम उठेगी, मन के अन्दर अन्दर, सु०।।९७३।।
इतने मे कह रहा कनकरथ, छोडो बाते अन्य ।
मा की वत्सलता पाकर तूं, हो जायेगी धन्य, सु०।।६७४।।
सुनकर मा का नाम रूकमणी, गदगद हुई विशेष ।
मा को छोड इसे जाना है, प्रियतम वाले देश, सु०।।९७५।।

बीत चुकी थी रात बहुत ही, कर अब बातें बन्द ।
तीनों लेने चले स्वयं ही, निद्रा का आनन्द, सु०॥६७६॥

क्योंकि सवेरे जल्दी चलना, करना और प्रयाण ।
जल्दी सोना जल्दी उठना, श्रेष्ठ स्वास्थ्य का प्राण,सु०॥६७७॥

कावेरी के लोगों से ले, विदा प्रयाण किया है ।
जिस रास्ते से आये वो ही, रास्ता पुनः लिया है,सु०॥६७८॥

दिखी दूर से ही मंदिर की, ध्वजा स्वयं लहराती ।
जिनदर्शन करने हित इनको, मानो हो बुलवाती,सु०॥६७९॥

रूकने की इच्छा से इनने, डाला यहीं पडाव ।
आदिनाथ प्रभु के दर्शन का, उमडा अन्तरभाव, सु०॥६८०॥

न्हा धो तीनों पहुँचे मन्दिर, प्रभु की पूजा करते ।
मधुर स्वरों से स्तवना करके, भव से पार उतरते,सु०।६८१।

राजर्षि के स्तूप पहुंचकर, ऋषि हो गई निढाल ।
खडा किया रूकमण ने उसको, अच्छी तरह संभाल,सु०।२८२।

कुटिया में जाकर के तीनों, करते हैं विश्राम ।
तीनों ने मिल बना लिया है, रूकने का प्रोग्राम,सु०॥६८३॥

रूकमण स्वयं लगी कुटिया की, साफ सफाई करने ।
श्रम से जी न चुराया जाये, यही भावना भरने,सु०॥६८४॥

उसे सजा दी मंदिर जैसी, घी के दीप जलाये ।
वातावरण स्वच्छ हो तो मन,प्रसन्नता भर जाये,सु०॥६८५॥

तीनो गए घूमने ऋषि अब, दिखलाती वो स्थान ।
पहली बार जहा पर देखा, पति को प्राण समान,सु०।।६८६।।
जुडी हुई रहती है स्मृतियाँ, स्थान समय के साथ ।
सुना सुनाकर ताजी करना, है अपने ही हाथ, सु०।।६८७।।
अगर सुनाने मे रस हो तो, थके न सुनने वाला ।
पी जाता पीने वाला हो, कोई पिलाने वाला, सु०।।६८८।।
आ कुटिया मे भोजन करके, तीनो सुख से सोये ।
बिना काम जग करके अपना,भला स्वास्थ्य क्यो खोये,सु।६८९।
समाचार आने का देने, भेज दिये है दो नर ।
कभी चूकते नही चतुर नर,जैसा भी हो अवसर,सु०।।६९०।।
आश्रम से चल दिए सवेरे, रथमर्दन की ओर ।
घर की ओर पहुचने मे पग, पडते कब कमजोर,सु०।।६९१।।
समाचार पा पूज्य पिताजी, सम्मुख लेने आये ।
देख दूर से ही तीनो ने, अपने शीश नवाये, सु०।।६९२।।
निकट पहुचते ही ये तीनो, रथ से उतर पडे है ।
क्योकि सामने आने वाले, इनसे बहुत बडे है, सु०।।६९३।।
पितृचरण मे नमस्कार करता है राजकुमार ।
पिता पुत्र का नाता होता,पावन परम उदार, सु०।।६९४।।
प्रणमन कर ऋषि रूकमरण दोनो,खडी किनारे जाकर ।
इन तीनो को प्रणमन करते, पुरवासी जन आकर,सु०।६९५।

झूम रहे हैं सब खुशियों में, बोल रहे जयकार ।
स्वागत में ऐसा करने का, है सबको अधिकार, सु०॥९९६॥

स्वागत यात्रा शुरू हो गई, धूमधाम के साथ ।
घूम घूमाकर राजमहल में, पहुंचे धरणीनाथ, सु०॥९९७॥

गए घरों को सभी नागरिक, पाकर नृप अभिवादन ।
स्वागत यात्रा का माना है, सबने यहीं समापन, सु०॥९९८॥

ऋषि रूकमण को लेकर पहुंचा, बेटा मां के पास ।
चरणों में सिर टेक वंदना, करता है सोल्लास, सु०॥९९९॥

मैं ऋषिदत्ता चरण वंदना, माताजी करती हूं ।
मैं रूकमण पद वंदन करती, पांवों में गिरती हूं, सु०।१०००।

मां पुतली-सी बनी रह गई, ऋषि को यहां निहार ।
सपने में हूं या जगती हूं, करने लगी विचार, सु०।१००१।
माँ दोनों तेरी बहुएं हैं, बोला राजकुमार ।
पर ये ऋषि आ गई कहाँ से, सुना कथा का सार, सु०।१००२।
सब कुछ बतलाया जायेगा, जो कुछ छुपा रहस्य ।
समाधान के लिये समुत्सुक, रहता नित्य मनुष्य, सु०।१००३।
पहले पूज्य पिताजी को कर, आयें अभी प्रणाम ।
ना कहने का प्रश्न न उठता, है यह पहला काम, सु०।१००४।
तीनों गए पिताने सुत को, बिठलाया है पास ।
देख रूकमणी ऋषि को खींचा, एक दीर्घ निःश्वास, सु०।१००५।

वेटा ! है ये कौन पिताजी, है ये वो ऋपिदत्ता ।
वो कैसे हो सकती है ये, जानू मै अलवत्ता, सु०।१००६।
जल्लादो को वुला पूछिये, उनने क्या था मारा ।
चल जायेगा पता वाद मे, सव कुछ मेरे द्वारा,सु०।१००७।
माँ को और आपको सवको, सव कुछ है वतलाना ।
न्हाले धोले भोजन करले, हो ले नया पुराना, सु०।१००८।
ऋपि रुकमरण के साथ महल मे, आया राजकुमार ।
तीनो होने लगे त्वरा से, न्हा धोकर तैयार, सु०।१००६।
भोजन कर सव पहुच गए है, राजाजी के पास ।
यथास्थान सव वैठे लेते, शाति प्रेम की सास, सु०।१०१०।
अथ से इति तक लगा सुनाने, स्वय कनकरथ वात ।
रोने लगे नृपति पीडा से, सव सुनने के साथ, सु०।१०११।
पुत्रवधू के साथ हुआ यह मेरे के अन्याय ।
इसके सिवा नही था मेरे, सम्मुख अन्य उपाय, सु ।१०१२।
वधे होगे कर्म चीकणे, करे कौन अनुमान ।
कैसे छूटूंगा पूछू मै, मिले अगर भगवान, सुनलो ।१०१३।
ऋपि ने कहा पिताजी इसमे, नही आपका दोप ।
नही रोइए स्वस्थ होइए, धरिये मन सतोप ।१०१४।
मेरे पापोदय से मेरे, सिर आया इलजाम ।
जीवित वची मिली आ सवसे, यही वडा शुभ काम ।१०१५।

क्षमा चाहता हूं तेरे से, बेटी करदे माफ।
पाप बहुत हल्का हो जाता, हो यदि पश्चाताप ।१०१६।

राजसभा में सबके सम्मुख, ऋषि की बात करूंगा।
लोगों में इसके प्रति ऊंचा, आदर भाव भरूंगा ।१०१७।

सुलसा की अपराध कहानी, आद्योपांत सुनानी।
जनता जान सकेगी जिससे, पापिन बड़ी पुरानी ।१०१८।

मां के साथ उठे ये तीनों, आज्ञा ले नरवर की।
मर्यादाएं सभी पालते, अपने - अपने घर की ।१०१९।

मां के पास पहुंचते ही गुण, रूकमण ऋषि के गाती।
ऋषि होती न उदार अगर तो, मै न यहाँ आ पाती ।१०२०।

ऋषि बोली मेरे गुण गाना है तो है तो मैं लो जाती।
रूकमण ने की बात बंद, सुन माता हर्ष मनाती ।१०२१।

राजसभा में राजकंवर ने, सारा भेद बताया।
पुरवासी लोगों ने सुनकर, बड़ा अचम्भा पाया ।१०२२।
राजसभा में अपना निर्णय, लगे सुनाने नरवर।
मुझे संयमी बन जाना है, राजपाट सब तजकर ।१०२३।
जग के मोह जाल में फंसकर, चक्कर खाता प्राणी।
संयम के पथ पर चलता है, कोई आतमज्ञानी ।१०२४।
सुत को राज्यभार यह सौपूं, मैं लूं संयमभार।
करे आप अनुमोदन मेरा, सपन बने साकार ।१०२५।

राजपुरोहित को दी आज्ञा, श्रेष्ठ मुहूर्त्त बताना ।
सुत को राज्य बिठाना मुझको, सयम व्रत अपनाना ।१०२६।
राजकुवर ने आकर घर मे, सारी वात सुनाई ।
ऋषि रुकमण सुनकर के चौंकी, यह क्या मन मे आई ।१०२७।
माताजी ! क्या जाने देगी, उन्हे इस तरह घर से ।
अच्छे कामो मे क्यो वाधा, पडे विचक्षण नर से ।१०२८।
नृप ने खुद ही रानी जी से, कह दी सारी वात ।
रानी वोली माथ-साथ हम, मयम लेंगे नाथ ।१०२९।
सासो का कुछ भी न भरोसा, आकर के रुक जाय ।
भोग त्यागना अच्छा है ये, वाल जभी पक जाय ।१०३०।
श्रेष्ठ मुहूर्त देखकर सुन को, दिया राज्य का भार ।
इतने मे आचार्य पधारे, करते उग्र विहार ।१०३१।
भद्राचार्य नाम गुरुवर का, साथ शिष्य परिवार ।
उपवन मे खुल गया मानलो, दिव्य ज्ञान भडार ।१०३२।
धर्मलाभ लेने को पहुचे, पुरवासी जन सारे ।
धर्मगुरु के विना कौन जो, भवसागर से तारे ।१०३३।
धर्मदेशना द्वारा अमृत, वरसाया गुरुवर ने ।
तरने वाले जीव आ गये, प्रभु के गुरु के शरणे ।१०३४।
राजा रानी दोनो ने ही, धारा सयम भार ।
क्योकि विरागी मन को लगता, है ससार असार ।१०३५।

तप-जप-संयम अनुष्ठान कर, मुनि आराधन करते ।
संलेखन संथारा करके, मन ममता परिहरते ।१०३६।

राज्य कनकरथ ने संभाला, सत्य न्याय के साथ ।
शासन उसका उत्तम होता, जो न करे पखपात ।१०३७।

श्रेष्ठ स्वप्न से सूचित जन्मा, ऋषि के सुत पुनवान ।
शूर साहसी ही होती है, शेरों की सन्तान ।१०३८।

नाम सिंहरथ रखा हो गया, बड़ा और गुणवान ।
बिना बुद्धि के विकस न पाते, कला और विज्ञान ।१०३९।

ऋषि ने और कनकरथ ने निज, सुत को सौंपा भार ।
संयम लेकर तप-जप द्वारा, उतर गये भव पार ।१०४०।

हुई समाप्त कहानी ले लो, लेने लायक सार ।
सुख दुख भोग रहा है प्राणी, कर्मो के अनुसार ।१०४१।

धूप और छाया सम सुख दुख, आते-जाते रहते ।
'हम भी अस्थिर तुम भी अस्थिर ऐसा हमसे कहते ।१०४२।

सुख में फूले दुख में भूले, भूल वही जीवन की ।
समझ रहे स्थिति सब संसारी, अपने-अपने मन की ।१०४३।

खरतरगच्छ स्वच्छ सुखसागर, संप्रदाय सुखकारी ।
पावन परम्परा अति प्यारी, भवजल तारण हारी ।१०४४।

श्रीजिन कान्ति पूज्य सूरीश्वर. पुण्यवान गुणवान ।
ज्ञानी-ध्यानी-व्याख्यानी गुरु, मेरे जीवन प्राण ।१०४५।

मणि मन मधुकर गुन-गुन करता, गुरु पद कज में लीन ।
मैं माध्यम हूं स्वर लहरी का, वही बजाये बीन ।१०४६।

भार सुमेरु गिरि मे है जितना, उससे ज्यादा भार ।
मेरे गुरु का मेरे पर है, कैसे सकू उतार ।१०४७।
(मुझ) मणि को सयय चिन्तामणी दे, चमक दमक दी सार ।
परम पूज्य गुरुदेव कान्ति के, गुण है अपरम्पार ।१०४८।
भले न कोई जाने माने मैं जानू मैं मानूं ।
जीवनभर गुरुवर की महिमा, मन भर नित्य वखानू ।१०४९।
मणि-मणि कहकर मुझे बुलाते, देते ज्ञान अमोल ।
बिना स्नेह के कौन दिखाये, अपना सब कुछ खोल ।१०५०।
गुरु करुणा से लिखा गया यह, ऋषिदत्ता का रास ।
स्वर्ण कान्ति ज्यो दीपे चमके, देता रहे प्रकाश ।१०५१।
इसमे भूल नजर आये तो, पढना आप सुधार ।
मुज्ञ सनेही विद्वज्जनगण-विनती करें स्वीकार ।१०५२।
शत्रुञ्जय गिरि की छाया को, पावनतम पहचान ।
हरि विहार मे चौमासे का, चुना शातिप्रद स्थान ।१०५३।
गुरुभाई सहयोगी साथी, मुनि मुक्तिप्रभ सागर ।
विनयी विद्याभ्यासी रखते, मेरा ध्यान बराबर ।१०५४।
दो हजार चम्मालीस भादव, उज्जवल चौथ सुहाई ।
सवत्सरी मनाई मैंने, रचना नई बनाई ।१०५५।
'मणिप्रभ' कहता सुनने वाले, लेंगे इससे सार ।
मानूगा अपरोक्ष इसे मै, वहुत वडा उपकार ।१०५६।

— इति० —